परिव्राजक

स्वामी विवेकानन्द

(चतुर्थ संस्करण)

श्रीरामकृष्ण आश्रम,
नागपुर, मध्यप्रदेश

जून १९५०] [मूल्य १।)

वक्तव्य

हिन्दी जनता के सम्मुख 'परिव्राजक' का दुहराया हुआ
र्थ संस्करण रखते हमें बड़ी प्रसन्नता होती है। आरम्भ में इस
तक का अनुवाद श्री पं. सूर्यकान्तजी त्रिपाठी 'निराला' ने किया
। हमारी 'स्मृतिग्रन्थमाला' के इस पुष्प में श्री स्वामी विवेकानन्दजी
पाश्चात्य देशों का भ्रमण-वृत्तान्त है जो उन्होंने मामूली बोलचाल
ी भाषा में एक डायरी के रूप में लिखा था। यत्न इस बात
ा किया गया है कि मौलिक वर्णन का पुट इस पुस्तक में ज्यों
ा त्यों बना रहे। श्री स्वामीजी के हृदय में इस बात की उत्कट इच्छा
ी कि भारतवर्ष इस अन्धकार की अवस्था से निकलकर एक बार फिर
अपने पूर्व यश तथा गौरव को प्राप्त हो और इन्हीं भावों से प्रेरित हो
उन्होंने अपने प्राच्य तथा पाश्चात्य देशों में भ्रमण के अनुभव के
आधार पर उन कारणों को हमारे सामने रखा है जिनसे भारतवर्ष का
पतन हुआ तथा हमें उन साधनों का भी दिग्दर्शन कराया है जिनके
आधार पर भारतवर्ष फिर अपने उच्च शिखर पर पहुँच सकता है।

प्रस्तुत पुस्तक में जगह जगह पर 'मार्जिनल नोट' के रूप
में छोटे छोटे शीर्षक दे देने से श्री स्वामीजी का मूल भ्रमण-वृत्तान्त
अधिक सरल तथा मनोरंजक हो गया है।

पं. डॉ. विद्याभास्करजी शुक्ल, एम. एस-सी., पी-एच. डी.,
ज ऑफ साइन्स, नागपुर के हम परम कृतज्ञ हैं जिन्होंने इस
न के कार्य में हमें बहुमूल्य सहायता दी है।

विश्वास है कि इस प्रकाशन से हिन्दी जनता का हित

-६-१९५०

प्रकाशक

स्वामी विवेकानन्द

(परिव्राजक वेष में)

परिव्राजक

[डायरी के रूप में लिखा हुआ भ्रमण वृत्तान्त]

भूमिका

स्वामीजी, ॐ नमो नारायणाय—'मो' कार को हृषीकेशी ढंग से ज़रा उदात्त कर लेना, भैया! आज सात दिन हुए हमारा जहाज चल रहा है, रोज ही क्या हो रहा है क्या नहीं, इसकी खबर तुम्हें लिखने की सोचता हूँ, खाता-पत्र और कागज-कलम भी तुमने काफी दे दिये हैं, लेकिन वही बंगालियाना "किन्तु" बड़े चक्कर में डाल देता है। एक—काहिल तो पहले दरजे का—डायरी या उसे तुमलोग क्या कहते हो—रोज लिखने की सोच रहा हूँ, लेकिन बहुतसे कामों से वह अनन्त "काल" नामक समय में ही रह जाता है, एक कदम भी आगे नहीं बढ़ता। दूसरे- तारीख आदि की याद ही नहीं रहती। यह सब तुम खुद ठीक कर लेना। और अगर विशेष कृपा हो तो समझ लेना, वार-तिथि-मास महावीर की तरह याद ही नहीं रहते—राम हृदय में हैं इसलिए। लेकिन दरअसल बात तो यह है कि यह कसूर है सारा अक्ल का और वही अहदीपन। कैसा उत्पात! "क्व सूर्य प्रभवो वंशः"—नहीं हुआ, "क्व सूर्य-प्रभव-वंश-चूड़ामणि रामैकशरणो वानरेन्द्रः" और कहाँ मैं "दीनहुं ते अतिदीन"; लेकिन हाँ, उन्होंने सौ योजन समुद्र एक ही छलांग से पार किया

अन्दर जा रहे हो, और ' माफ करमाना भाई, अच्छे आदमी को काम का भार सौंपा है। गम करो ' कहाँ तुम्हें सात दिन की समुद्र-यात्रा का वर्णन लिखूंगा, उसमें कितना रंग-ढंग, कितना कार्निस मसाला रहेगा, कितना हास्य, कितना रस आदि आदि और कहाँ इतना फिजूल बक रहा हूँ। असल बात यह कि माया का छिलका छुड़ाकर असफल गाने की बराबर कोशिश की गई है, अब एकाएक स्वभाव के सौन्दर्य का ज्ञान कहाँ से लाऊँ, कहाँ। "कह काशी कहं काश्मीर कहं खुरासान गुजरात।" * तमाम उम्र घूम रहा हूँ। कितने पहाड़, नद नदी, गिरि, निर्झर, उपत्यका, अधित्यका, चिर-नीहार-मंडित मेघ-मेखलित पर्वतशिखर, उत्तुंग-तरंग-भंगकल्लोलशाली कितने वारि-निधि देखे, सुने, लांघे और पार किये, लेकिन किरांचियों और ट्रामों से घर्षित धूलि-धूसरित कलकत्ते के बड़े रास्ते के किनारे, कैसे पानों की पीक-विचित्रित दीवारों के छिपकली-मूषिक-छछुन्दर-मुखरित इकतल्ले घर के भीतर दिन के वक्त दिया जलाकर आम्र-काष्ठ के तख्ते पर बैठे हुए, मद्दे भचभचे (हुक्का) का शौक करते हुए कवि श्यामाचरण ने हिमाचल, समुद्र, प्रान्तर, मरुभूमि आदि की हूबहू तस्वीरें खींचकर जो बंगालियों का मुख उज्ज्वल किया है, उस ओर ख्याल दौड़ाना ही हमारी दुराशा है। श्यामाचरण बचपन में पश्चिम की सैर करने गये थे, जहाँ आकण्ठ भोजन के पश्चात् एक लोटा जल पीने से ही बस सब हजम,

फिर भूल,—यहीं श्यामाचरण की प्रतिभाशालिनी दृष्टि ने कि
प्राकृतिक विराट और सुन्दर दृश्यों की उपलब्धि कर ली है। प
जरा मुश्किल की बात यही है, सुनता हूँ कि उनका वह पश्चिम
वर्द्धमान नगर तक ही है।

लेकिन चूँकि तुम्हारा हार्दिक अनुरोध है और मैं भी बिल
कुल "लिहि रस वञ्चित गोविन्ददास" नहीं हूँ, यह साबित
करने के लिए श्रीगणेश जी का स्मरण कर कथा प्रारम्भ करता हूँ।
तुमलोग भी खंभे और खुन्तियाँ छोड़कर सुनो—

के बीच, उस कोटि कोटि मानवों के क्षिप्रप्राय द्रुत-पद सञ्चार के भीतर, मन मानो स्थिर हो जाया करता था। वह जनस्रोत, वह रजोगुण का स्फालन, वह प्रतिपद-प्रतिद्वन्द्वि-संघर्ष, वह विलास-भूमि, अमरावती सदृश पेरिस, लण्दन, न्यूयार्क, बर्लीन, रोम, सब लुप्त हो जाता था, और मैं सुनता था—वही "हर हर हर," देखता था—वही हिमालय-क्रोडस्थ जनशून्य विपिन और कल्लोलिनी सुर-तरंगिनी जैसे हृदय में, मस्तक में शिरा-शिरा में सञ्चार कर रही है और गर्जना कर कर पुकार रही है "हर हर हर।"

क्या वर्णन करता हुआ फिर क्या बक रहा हूँ। देखो पहले ही तो मैंने कह रखा है, मेरे लिए यह सब गैर-मुमकिन है; लेकिन अगर बरदाश्त कर सको तो फिर कोशिश कर सकता हूँ।

अपने आदमियों में एक रूप रहता है। वैसा और कहीं भी

---

* ऐतिहासिक इलियट के मत से लालबेगियों (झाड़ूदार-मेहतर-सम्प्रदाय-विशेष) का उपास्य आदिपुरुष या कुलदेवता लालबेग और उत्तर पश्चिम का लालगुरु (राक्षस अरण्य किरात) अभिन्न हैं। वाराणसीवासी लालबेगियों के मत से पीर जहर ही (सिद्धि दाताधु सैयद जहर) लालबेग है।

नहीं मिल सकता। अपने नक-चढ़े बूढ़े भाई-बहन, लड़के-बंगाल देश का लड़कियों में सुन्दर गन्धर्व-लोग में भी नहीं प्राकृतिक सौन्दर्य मिलेंगे। लेकिन गन्धर्व-लोक में घूमकर अगर अपने आदमी दरअसल सुन्दर मिलें तो उस आनन्द के रखने की और जगह कहाँ? यह अनन्त-शस्य-श्यामला सहस्र-स्रोतस्वती-माल्यधारिणी बंगभूमि का भी एक रूप है। वह रूप कुछ है मलयालम (मलाबार) में और कुछ काश्मीर में। जल में क्या कोई रूप नहीं है? जल में जलमयी, मूसलधार वृष्टि अर्ह के पत्तों पर से बही जा रही है, असंख्य नाल, खजूर और नारियलों के सर जरा झुके हुये वह धारा-संपात वहन कर रहे हैं? चारों ओर मेढकों की घर्घर आवाज,—इसमें क्या रूप नहीं है? और हमारा गंगा का किनारा, विदेश से बिना आये, डायमण्ड हारबर के मुहाने से गंगा में प्रवेश बिना किये, यह समझ में नहीं आता। वह सघन नील आकाश, उसके अंक में काले बादल, उनकी गोद में सफेद मेघ, सुनहले किनारीदार, जिनके नीचे झाड़ के झाड़, ताल-नारिकेल और खजूरों के सर, हवा में जैसे लाखों चँवर हिल रहे हों, उसके नीचे फीका, घना, ईषत् पीताभ—कुछ स्याहपन मिला हुआ,—आदि आदि हर तरह के सब्जई के ढेले आम, लीची, कटहल, पत्ते ही पत्ते; पेड़ डाले कुछ नजर नहीं आते—झाड़ के झाड़ बाँस हिलते और झूमते हैं, और सब के नीचे—जिसके पास यारकंदी, ईरानी, तुर्किस्तानी गलीचे दूलीचे हार मानकर कहाँ पड़े रहते हैं वही घास, जितनी दूर देखो, वही सरसब्ज घा सी ने छाट-छूट कर बराबर कर रखा हो;

पानी के किनारे तक वही घास, गंगा की मन्द मधुर हिलोरें ने जहाँ तक जमीन को ढक रखा है, जहाँ तक घास ही घास जमीन में मढ़ी हुई है। उसके नीचे हमारी गंगा का जल, फिर पैरों के नीचे से देखो, क्रमशः ऊपर— सिर के ऊपर तक, एक रेखा के अन्दर इतने रंगों की क्रीड़ा, एक ही रंग की इतनी किस्में, और भी कहीं देखी है? अहा रंगों का नशा कभी आया है? जिस रंग के नशे से पतंग आग में जल जाते हैं, मधु-मक्खियाँ फूलों में बन्द होकर भूखों मर जाती हैं? हाँ जी, कहता हूँ- अब इन गंगाजी की क्या शोभा है, जरा देख लो भर नजर, फिर विशेष कुछ रहने का नहीं। दैत्य दानवों के हाथ में पड़कर यह सब जा रहा है। उस घास की जगह खड़े होंगे ईंटों के पजावे और उतरेंगे ईंटों की खोदाई में गड्ढे महाशय! जहाँ गंगा की छोटी छोटी तरंगें घासों के साथ क्रीड़ा कर रही हैं, वहाँ खड़े होंगे पाट से लदे फ्लाट और वही गधा-बोट और वह जो सब ताल-तमाल, आम और लीची के रंग हैं, वह नील आकाश, मेघों की बहार, यह सब क्या और फिर भी देख पाओगे? देखोगे पत्थर के कोयले का धुआँ, और उसके बीच बीच भूतों की तरह अस्पष्ट खड़ी चिमनियाँ !!"

अब जहाज समुद्र में गिरा। वे जो "दूरादयश्चक्र" इत्यादि "तमालतालीवनराजि"* आदि आदि हैं, वे सब किसी काम की

* दूरादयश्चक्रनिभस्य तन्वी
तमालतालीवनराजिनीला।
आभाति वेला लवणाम्बुराशे
र्धारानिबद्धेव कलङ्करेखा॥ —रघुवंश

नहीं मिल सकता। अपने नक-चपटे दूबे भाई-बहन, लड़के-
बंगाल देश का लड़कियों से सुन्दर गन्धर्व-लोक में भी नहीं
प्राकृतिक सौन्दर्य मिलेंगे। लेकिन गन्धर्व-लोक में घूमकर अगर
अपने आदमी दरअसल सुन्दर मिले तो उस आनन्द के रखने की
और जगह कहाँ? यह अनन्त-शस्य-श्यामला सहस्र-स्रोतस्वती-
माल्यधारिणी बंगभूमि का भी एक रूप है। वह रूप कुछ है
मलयालम (मलाबार) में और कुछ काश्मीर में। जल में क्या
कोई रूप नहीं है? जल में जलमयी, मूसलधार वृष्टि अर्ई के
पत्तों पर से वही जा रही है, असंख्य ताल, खजूर और नारियलों
के सर जरा झुके हुये वह धारा-सम्पात वहन कर रहे हैं! चारों ओर
मेढकों की घर्घर आवाज,—इसमें क्या रूप नहीं है? और हमारा
गंगा का किनारा, विदेश से बिना आये, डायमण्ड हारबर के
मुहाने से गंगा में प्रवेश बिना किये, यह समझ में नहीं आता।
वह सघन नील आकाश, उसके अंक में काले बादल, उनकी गोद
में सफेद मेघ, सुनहली किनारीदार, जिनके नीचे झाड़ के झाड़,
ताल-नारिकेल और खजूरों के सर, हवा में जैसे लाखों चँवर हिल
रहे हों, उसके नीचे फीका, घना, ईषत् पीताभ—कुछ स्याहपन मिला
हुआ,—आदि आदि हर तरह के सब्जई के ढले आम, लीची,
कटहल, पत्ते ही पत्ते; पेड़ डाले कुछ नजर नहीं आते—झाड़
के झाड़ बाँस हिलते और झूमते हैं, और सब के नीचे—जिसके
पास यारकंदी, ईरानी, तुर्किस्तानी गलीचे दुलीचे हार मानकर
कहाँ पड़े रहते हैं वही घास, जितनी दूर देखो, वही सरसब्ज
घास ही घास, जैसे किसी ने छाट-छूट कर बराबर कर रखा हो;

पानी के किनारे तक वही घास, गंगा की मन्द मधुर हिलोरों ने जहाँ तक जमीन को ढक रखा है, जहाँ तक घास ही घास जमीन में गठी हुई है। उसके नीचे हमारी गंगा का जल, फिर पैरों के नीचे से देखो, क्रमशः ऊपर -- सिर से ऊपर तक, एक रेखा के अन्दर इतने रंगों की क्रीड़ा, एक ही रंग की इतनी किस्में, और भी कहीं देखी है? भला रंगों का नशा कभी आया है? जिस रंग के नशे में पतंग आग में जल जाते हैं, मधु-मक्खियाँ फूलों में बन्द होकर भूखी मर जाती हैं? हाँ जो कहता हूँ- अब इन गंगाजी की क्या शोभा है, जरा देख लो भर नजर, फिर विशेष कुछ रहने का नहीं। दैत्य दानवों के हाथ में पड़कर यह सब जा रहा है। उस घास की जगह खड़े होंगे ईंटों के पजावे और उतरेंगे ईंटों की खोलियों में गड्ढे महाशय! जहाँ गंगा की छोटी छोटी तरंगें घासों के साथ क्रीड़ा कर रही हैं, वहाँ खड़े होंगे पाट से लदे फ्लाट और वही गधा-बोट और वह जो सब ताल तमाल, आम और लीची के रंग हैं, वह नील आकाश, मेघों की बहार, यह सब क्या और फिर भी देख पाओगे? देखोगे पत्थर के कोयले का धुआँ, और उसके बीच बीच भूतों की तरह अस्पष्ट खड़ी चिमनियाँ !!!

अब जहाज समुद्र में गिरा। ये जो "दूरादयश्चक्र" इत्यादि "तमालतालीवनराजि"* आदि आदि हैं, वे सब किसी काम की

* दूरादयश्चक्रनिभस्य तन्वी
तमालतालीवनराजिनीला।
आभाति वेला लवणाम्बुराशे
र्धारानिबद्धेव कलङ्करेखा॥ —रघुवंश

मानें नहीं। यों तो महाकवि को नमस्कार करता हूँ, लेकिन उन्होंने भर उस हिमालय भी नहीं देखा, न समुद्र ही, यह मेरा बंधा ख्याल है।*

यहाँ स्याह-सफ़ेद मिले हैं, जैसे कुछ प्रयाग का भाव हो। सब जगह दुर्लभ होने पर भी "गंगाद्वारे प्रयागे च गंगा-सागर-संगमे।" लेकिन इस जगह के लिए कहते हैं—

सागर-सङ्गम

यह ठीक गंगा का मुहाना नहीं है। फिर मैं नमस्कार करता हूँ, इसलिए कि "सर्वतोक्षिशिरो मुखम्"।

कितना सुन्दर है। सामने जहाँ तक नज़र जाती है, तरंगायित, फेनिल, सघन नील जलराशि, वायु के साथ ताल-ताल पर नाच रही है। पीछे हमारा गंगाजल, वही विभूतिभूषणा, वही "गंगाफेनसिता जटा पशुपतेः।" + वह जल कुछ अधिक स्थिर है, सामने विभाग करने वाली रेखा। जहाज़ एक बार सफ़ेद जल

---

* काश्मीर भ्रमण और उस देश के पुरावृत्त का पाठ करने के पश्चात् स्वामीजी का इस विषय में मत बदल गया था। महाकवि कालिदास बहुत दिनों तक काश्मीर देश के शासनकर्ता के पद पर प्रतिष्ठित थे, यह हाल उस देश के इतिहास से विदित हो जाता है। रघुवंश आदि में लिखा गया हिमालय-वर्णन काश्मीर-खंड के हिमालय के दृश्यों से अनेक स्थलों पर मिलता जुलता है। परन्तु [illegible] ने कभी समुद्र भी देखा था, इसके सम्बन्ध में कोई प्रमाण [illegible] मिला।

+ शिवापराधभंजन स्तोत्र—श्रीमत् शंकराचार्यकृत।

पर उठ रहा है, एक बार स्याह जल पर। अब सिर्फ नीला जल, सामने पीछे आस पास सिर्फ नीला ही नीला जल, सिर्फ तरंग-भंगिमाएँ। नील केशराशि, नील कान्ति अङ्ग आभा, नीलाम्बर वास। देवताओं के भय से करोड़ों असुर समुद्र के नीचे छिपे हुए थे। आज उन्हें अच्छा मौका हाथ लगा है, आज वरुण उनके सहायक हैं, पवनदेव साथी; महा गर्जन, विकट हुंकार, फेनमय अट्टहास, दैत्यकुल आज महोदधि पर समरताण्डव करते हुए मत्त हो रहे हैं। उसके बीच हमारा अर्णव-पोत, अन्दर जहाज के जो जाति सागराम्बरा धरित्री की सम्राज्ञी है, उसी जाति की स्त्रियाँ और पुरुष, विचित्र वेशभूषा धारण किये हुये, स्निग्ध चन्द्र सा वर्ण, मूर्तिमान आत्मनिर्भरता-आत्मप्रत्यय, कृष्ण वर्णों के निकट दर्प और दम की तस्वीरों की तरह दिखलाई दे रहे हैं—सगर्व पादचारण कर रह हैं। ऊपर वर्षा के मेघों से घिरे आसमान के जीमूतमन्द्र, चारों ओर शुभ्राकार तरंगनियों का नृत्य, स्फालन, गुरु-गर्जना, पोत-राज के समुद्रबल-उपेक्षाकारी महायन्त्र का हुंकार—वह एक विराट सम्मेलन—तन्द्राच्छन्न की तरह विस्मय-रस से भरा हुआ यही सुन रहा हूँ; सहसा यह समस्त जैसे भेद कर अनेक स्त्री-पुरुष-कण्ठ-मिश्रणोत्पन्न गंभीर नाद और तार सम्मिलित "रूल ब्रिटानिया, रूल दी वेव्स" महागीतध्वनि कानों को सुनाई दी! चौंककर देखता हूँ—

जहाज खूब झूम रहा है, और तु—भाई साहब दोनों हाथों सिर थामे अन्नप्राशन के अन्न के पुनराविष्कार के प्रयत्न में

मी-सिकनेस

मीन हैं ! दूसरे दर्जे में दो बंगाली लड़के पढ़ने के लिए जा रहे हैं। उनकी हालत भाई साहब की हालत से भी बुरी हो रही है ! एक तो ऐसा डरा हुआ है कि किनारा पा जाय, तो एक ही दौड़ में देश में दाखिल हो ! यात्रियों में भारतवासी दो वे और दो हम आधुनिक भारत के प्रतिनिधि ! जिन दो दिनों जहाज गंगा के अन्दर था, तु—भाई साहब 'उद्बोधन' संपादक के गुप्त उपदेश के फल स्वरूप "वर्तमान भारत" प्रबंध जरा जल्द समाप्त कर देने के लिए परेशान कर डालते थे। आज मौका देखकर मैंने भी पूछा, "वर्तमान भारत की हालत कैसी है ?" भाई साहब ने एक दफा सेकेण्ड क्लास की ओर देखकर एक लम्बी सांस छोड़कर जवाब दिया—"बड़ी चिन्ताजनक, निहायत घुला जा रहा है।"

इतनी बड़ी पद्मा को छोड़कर गंगा का माहात्म्य, हुगली नाम की धारा में क्यों आ पड़ा, इसका कारण बहुतेरे कहते हैं कि भागीरथी का मुख ही गंगा की प्रधान और आदि

हुगली नदी

धारा है। इसके बाद गंगा पद्मा के मुहाने की ओर निकल गई। इसी प्रकार "टॉलिस नाला" नाम की खाल भी आदि गंगा होकर गंगा की प्राचीन धारा थी। कवि कंकण पोतवणिक-नायक को उसी पथ से सिंहल द्वीप ले गये हैं। पहले त्रिवेणी तक बड़े बड़े जहाज अनायास ही प्रवेश कर जाते थे। सप्तग्राम नामक बन्दर त्रिवेणी घाट के कुछ दूर ही सरस्वती पर स्थित था। बहुत प्राचीन काल से ही यह सप्तग्राम बंग देश के

में आढ़त खोली। इसके बाद अंग्रेजों ने और भी नीचे कलकत्ता बसाया। पहले की सभी जगहों में अब जहाज नहीं जा सकता। कलकत्ता अब भी खुला हुआ है, लेकिन पीछे से क्या होगा, यह चिन्ता सब को लगी हुई है।

परन्तु शान्तिपुर के आसपास तक गंगा में गरमियों में भी जो इतना पानी रहता है, इसका एक विचित्र कारण है। ऊपर का बहाव प्रायः बन्द हो जाने पर भी राशि राशि जल मिट्टी के भीतर से चूता हुआ गंगा में आ पड़ता है। गंगा की तरह अब भी पासवाली जमीन से बहुत नीची है। यदि यह गढ़ा क्रमशः मिट्टी बैठने पर ऊंचा हो जाय तो फिर मुश्किल है और एक भयप्रद किंवदन्ती है—कलकत्ते के पास भी गंगाजी भूकम्प या अन्य कारणों से बीच बीच में इस तरह सूख गई हैं, कि आदमी पैरों पार हो गये हैं। १७७० ई० मे, सुनता हूँ ऐसा ही हुआ था। एक दूसरी रिपोर्ट में यह मिलता है कि १७३४ ई० में २० अक्टोबर बृहस्पतिवार दोपहर के समय भाटा हो जाने पर गंगा बिल्कुल सूख गई थीं। ठीक बारबेला (अशुभ मुहूर्त) में अगर यह हाल हो गया होता तो क्या होता—तुम्हीं लोग सोचो—गंगा शायद फिर लौटती ही नहीं।

यह तो हुई ऊपरी बातें। नीचे महाभय—जेम्स और मेरी नामक चोर बालू है। पहले दामोदर नद कलकत्ते से ३० मील **जेम्स और मेरी** ऊपर गंगा में आकर गिरता था। अब काल की **नामक चोर बालू** विचित्र गति से आप ३१ मील से अधिक दक्षिण में आकर हाजिर हुए हैं। इसके करीब ६ मील नीचे रूपनारायण (नद) जल ढाल रहे हैं, मणि-कांचन-संयोग से आप

लोग हरहराते हुये आते रहे, लेकिन यह कीच कौन धोये ? इसलिए तो राशि-राशि बालुका ! वह भर कभी यहाँ कभी वहाँ, कभी कुछ कड़ा, कभी कुछ नर्म हो रहा है। इस भय की कहीं हद है। दिन रात नाप जोख हो रही है। जरा खयाल दूसरी तरफ गया-कुछ दिनों तक नाप जोख जो भूली कि जहाज वहीं जमा। उस रेती को छूते ही छूते अप्रत्याशित या सीधे पाताल प्रवेश !! ऐसा हुआ भी हुआ है, बड़े-बड़े तीन मस्तूलवाले जहाज पर जमीन पकड़ने के आध-घण्टे के बाद देखा गया सिर्फ एक ही मस्तूल रूपी सन्तरी खड़ा है। यह रेता साहब दामोदर—रूपनारायण के मुहाने में ही मौजूद हैं। दामोदर इस वक्त सौतली गावों में प्रसन्न नहीं, आपको जहाजों की चटनी पसन्द आई है। १८७७ ई० में कलकत्ते से कौण्टी आफ स्टारलिङ्ग नाम के एक जहाज में १४४४ टन गेहूँ लदा जा रहा था। उस विकट रेता से ज्यों ही लगा कि उसके बाद आठ ही मिनट में "कुछ खबर ही नहीं !" १८७४ ई० में २४०० टन माल लदे एक जहाज की दो ही मिनट में यह हालत हुई थी। धन्य है माताजी तुम्हारा मुख ! हमलोग सही सलामत पार हो आये, इसके लिए प्रणाम है।

यह जहाज कितना आश्चर्यजनक है ! जिस समुद्र की ओर किनारे से देखने पर डर लगता है, जिसके बीच आकाश झुककर

जहाज की क्रमोन्नति

मिल गया सा मालूम होता है, जिसके गर्भ से सूर्य धीरे धीरे उठता और डूब जाता है, जिसकी भौंहों में जरा सा बल पड़ गया कि होश उड़ जाते हैं, अब आमरास्ता हो रहा है, सब से सरल मार्ग ! यह जहाज तैयार

किसने किया ? किसीने नहीं। अर्थात्, मनुष्यों के प्रधान अवलम्ब के रूप में जो सब कल-पुर्जे हैं, जिनके बिना एक पल भी नहीं चल सकता, रद्दोबदल से और सब कल कारखाने ईजाद किये गये हैं, उनकी तरह, सब ने मिलकर किया है जिस तरह पहिये; पहियों के बिना क्या कोई काम चल सकता है ? हचाहचवाली बैलगाड़ी से लेकर "उड़ीसा जगन्नाथपुरी मेले विराजो जी" के रथ तक; सूत कातनेवाले चर्खा से लेकर बड़े बड़े कारखानों की कलों तक क्या कुछ पहियों के बिना चल सकता है ? यह चाक-सृष्टि पहले किसने की ? किसीने नहीं; अर्थात सबने मिलकर की है। पहले के आदमी कुल्हाड़े से काठ काट रहे हैं, बड़ी बड़ी पेंडियाँ ढालू जगहों से लुढका रहे हैं, फिर उन्हें काटकर क्रमशः ठोस पहिये तयार हुए, बाद में आरा और नाभी इत्यादि—अन्त में आजकल के पहियों की सृष्टि हुई।

ये हैं हमारे पहिये ! कितने लाख वर्ष लगे, कौन कह सकता है ? लेकिन हाँ, इस हिन्दुस्तान में जो कुछ भी होना है वह रह जाता है। उसकी चाहे जितनी भी तरक्की हो, चाहे जितना भी रद्दोबदल हो, नीचे की सीढियों पर चढ़ने वाले लोग न जाने कहाँ से आ जाते हैं, और सब सीढ़ियाँ रह जाती हैं। एक बांस से एक तार बांध कर बजाया गया, उसके क्रम से बालों के साज और कमानी से पहले बेला हुआ, फिर कितने रूप बदले, कितने तार हुए, कितने तांत ! साज के नाम और रूप बदले, इसराज—सारंगियाँ हुईं। लेकिन अब भी क्या कोचवान मयाँ लोग घोड़े के कुछ बाल लेकर सकोरे में एक चीरे बांस का

पन्द्रह ग्यारह कदम–चों चों करते हुए, "मोग मग्न कहरवा"* के जाल बुनने का हाल जाहिर नहीं करते? मध्यदेश में चलकर देखो, अब भी ठोस पहिये टनक रहे हैं, खास कर इन रबर टायर के दिनों में।

बहुत पुराने जमाने के आदमी, यानि सतयुग के जब छोटे से बड़े तक सत्यनिष्ठ थे और ऐसे कि भीतर कुछ और बाहर कुछ और हो जाय, इस डर से कपड़े भी नहीं पहनते थे; कहीं स्वार्थपरता न समा जाय, इसलिए विवाह नहीं करते थे; और भेद-बुद्धिरहित हो सब लाठी और ढेलों की मदद से हमेशा "परद्रव्येषु लोष्ठवत" समझते थे। उस समय जल-संतरण के विचार से उन लोगों ने पेड़ों के बीच का हिस्सा जलाकर या दो चार पेड़ियों एक साथ बाँधकर 'भेला' आदि की सृष्टि की। उड़ीसा से कोलम्बो तक "कट्टमारण" देखे हैं ना? भेला किस तरह समुद्र में भी दूर दूर तक चली जाती है, देखा तो होगा ही, यहीं है जनावमत्—"ऊर्ध्वमूलम्।"

और वह जो बंगाल (पूर्व बंगालवाले) माँझियों की नावें हैं, जिन पर चढ़कर दरियों के पांच पीरों को पुकारना पड़ता है, वह जो चटग्रामी माँझियों के बुनियादी बजरे, जो जरा भी हवा चली कि पतवार का भरोसा छोड़ देते है और माँझियों को उनके

दिन को मार मछली, रात को बिने जाल।
ऐसी दिकदारी, हुआ जी का जंजाल॥"—
इस तरह के गाने इक्के और तांगेवाले अक्सर गाया करते हैं।

देवताओं के नाम याद दिलाते हैं; वह जो पछाहीं नाव है—जिस पर तरह-तरह की रंगबिरंगी छापें खिंची हुई, पीतल की दो आंखें लगाये, जिसके माँझी खड़े खड़े डाँड खींचते हैं; वह श्रीमंत सौदागर की नाव (कवि-कंकण के मत से श्रीमंत सौदागर ने डाँडों से बल से ही बंग सागर पार किया था; और गलदा चिंडी—मछली कहलाने वाला ज्यादा से ज्यादा हाथ भर का एक कीड़ा—की मूछों में फँसकर किश्ती इकतरफा होकर डूबने पर आयी थी आदि) उर्फ गंगासागरी डोंगी—ऊपर बढ़िया छाई हुई, नीचे बांस का पटाव, भीतर कतार की कतार गंगाजल के बर्तन जिनमें ठंढा गंगाजल भरा है; (तुम लोग गंगासागर जाओ और जाड़ाके की उत्तर की हवा के झोंके में कचे नारियल पिओ, उनकी साड़ी और शक्कर खाओ ।) और वे डोंगियाँ जो बाबुओं को आफिस ले जाती और फिर मकान वापस लाती हैं, बाली के माँझी जिनके सरदार हैं, बड़े मजबूत, बड़े उस्ताद, कोन्नगर की तरफ बादल देखा कि लगे किश्ती संभालने, अब जौनपुरी जवानों के दाखल में जा रही हैं । उनकी बोली है कहिला गईला, बानि थानी । उन पर तुम्हारे महन्त महाराज का बहादुर पकड़ लाने का हुक्म हुआ तो लोग सोचकर ही हैरान, "ऐ स्वामीनाथ, ऐ बहादुर, कहा मिलाब ई तो हम ना जानी ।" और वह 'गधाबोट' जो सीधा चलना ही नहीं जानती और वे जो बड़ी नावें हैं—एक से तीन मस्तूल

पाल के सहारे जहाज चलाना एक आश्चर्यजनक आवि-ष्कार है। हवा चाहे जिस तरफ हो, जहाज अपने गन्तव्यस्थान पर पहुँचेगा ही। लेकिन हवा प्रतिकूल हुई तो कुछ देर होगी। पालवाला जहाज देखने में कैसा सुंदर! दूर से जान पड़ता है जैसे बहुत से पंखों वाला कोई पक्षिराज आकाश से उतर रहा हो। लेकिन पालदार जहाज बहुत सीधा नहीं चल सकता। हवा जरा प्रतिकूल होने पर ही उसे तिरछी चाल चलना पड़ता है। परन्तु हवा बिलकुल बन्द हुई कि मुश्किल आ पड़ी—पंख समेटे हुए बैठे रहना पड़ता है। महा-विषवत्-रेखा के निकट वाले देशों में अब भी कभी कभी ऐसा हुआ करता है। अब पालवाले जहाजों में लकड़ी का व्यवहार कम कर दिया है, ये भी लोहे से तैयार होते हैं, पालदार जहाजों की कप्तानी या मल्लाहगिरी करना स्टीमरों की अपेक्षा बहुत ज्यादा मुश्किल है, और पालदार जहाजों की काफ़ी जानकारी रहे बिना कभी अच्छा कप्तान नहीं हो सकता। हर दम पर हवा पहचानना, बहुत दूर से संकट की जगह के लिए होशियार हो जाना, स्टीमरों की अपेक्षा ये दोनों बातें पाल-वाले जहाजों के लिए आवश्यक हैं। स्टीमर बहुत कुछ अपने कब्जे में है, क्षणभर में कल बन्द की जा सकती है। सामने-पीछे आसपास इच्छानुसार थोड़े ही समय में फिराई जा सकती है। पाल-जहाज हवा के हाथ में है। पाल खोलते, बन्द करते, पतवार फेरते-फेरते जहाज रेती से लग सकता है, डूबे हुए पहाड़ों के

पाल-जहाज, स्टीमर तथा युद्ध-जहाज़

ऊपर चढ़ सकता है, या किसी दूसरे जहाज से टक्कर खा सकता है। अब कुलियों को छोड़कर यात्री बहुधा पाल जहाजों से नहीं जाते। पाल-जहाज अक्सर माल ले जाते हैं, वह भी नमक जैसे भूसी-माल। छोटे-छोटे पाल-जहाज (जैसे बड़ी नावें आदि) किनारे पर ही व्यवसाय करते हैं। स्वेज नहर के भीतर से घसीटने के लिए स्टीमर किराये करने में हजारों रुपये टैक्स देने से पाल-जहाज को परता नहीं बैठता। पाल-जहाज अफ्रीका का चक्कर काटकर छः महीने बाद विलायत पहुँचता है। पाल-जहाज की इन सब बाधाओं के कारण उस समय का जल-युद्ध संकट का था। जरा सी हवा इधर-उधर हुई, जरा सा समुद्र का बहाव इधर से उधर हुआ कि हार-जीत हो गई। दूसरे वे सब जहाज काठ के थे। लड़ाई के समय लगातार आग लगती थी और वह आग बुझानी पड़ती थी। उन जहाजों की गढ़न भी एक दूसरी तरह की थी। एक तरफ चपटा था और बहुत ऊँचा, पाँच मंजला-छः मंजला। जिस तरफ चपटा था, उसीके ऊपर के मंजले में काठ का एक बरामदा निकला रहता था। उसीके सामने कमाण्डर की बैठक होती थी, अगल बगल आफिसरों की जगहें। इसके बाद एक बड़ी सी छत—ऊपर खुली हुई छत की दूसरी ओर फिर दो चार कमरे, नीचे के मंजले में भी उसी तरह की ढकी दालान और उसके नीचे भी एक दालान; उसके नीचे दालान और मल्लाहों के सोने की जगह, खाने की जगह, आदि आदि। ऊपर मंजले की दालान की दोनों ओर तोपें थीं, कतार की दीवारें कटी हुईं, (तोप के मुँह के आकार) उनके भीतर

से तोप के मुँह, दोनों तरफ़ राशि राशि गोले (और लड़ाई के समय बारूद के थैले) तब के लड़ाई वाले जहाजों का हरएक मंज़ला बहुत नीचा हुआ करता था; सर झुकाकर चलना पड़ता था। उस समय जहाज पर लड़ने वालों का संग्रह करने में कष्ट भी बहुत होता था। सरकार की आज्ञा थी कि जहाँ से हो सके धर-पकड़ कर या भुलावा देकर आदमी ले जाओ। माता के पास से लड़के को, स्त्री के पास से पति को जबरन छीन ले जाते थे। किसी तरह जहाज पर ले आया गया कि मतलब गठ गया! इसके बाद, चाहे बेचारा कभी जहाज पर न चढ़ा हो; तत्काल आज्ञा मिली, मस्तूल पर चढ़ो। हुक्म तामील न किया कि चाबुक! कितने ही मर भी जाते थे। कानून बनाया अमीरों ने, देश-देशान्तरों का व्यवसाय, लूटपाट, राज्य भोग करेंगे वे लोग और गरीबों के लिए सिर्फ़ खून बहाना और जान देना, जो हमेशा से इस दुनिया में होता आया!! अब वे सब कानून नहीं हैं, अब "प्रेस-गैङ्ग" के नाम से बेचारे किसानों का कलेजा नहीं दहल उठता, अब पसन्द का सौदा है; परन्तु हाँ, बहुत से चोर-लुटेरे-उठाईगीर लड़कों को जेल न भेजकर इन लड़ाई के जहाजों में नाविक का काम सिखाया जाता है।

बाष्प-बल ने यह भी बहुत कुछ बदल डाला है। अब जहाज के लिए पाल अनावश्यक सा है। हवा के सहारे का बहुत कम भरोसा रह गया है। आँधी और झकोरों का डर भी बहुत कम है। सिर्फ़, जहाज पहाड़-पर्वतों से न टकराए, इतना ही बचाना पड़ता है। लड़ाई के जहाज तो पहले की हालत से बिलकुल भिन्न हो गये हैं। देखकर समझ में आता ही नहीं कि ये जहाज

हैं या छोटे-बड़े तैरते हुए लोहे के क़िले ! तोपों भी इन में बहुत घट गई हैं। लेकिन इस समय की तोपों के सामने पुरानी तोपें खिलवाड़ ही ठहरेंगी। और लड़ाई के जहाजों की भी कैसी ! सब से छोटे जो हैं—"टारपिडो", वे सिर्फ़ छोड़ने के लिए, उनसे कुछ बड़े जो हैं, वे हैं दुश्मनों के मालदार जहाजों पर दखल जमाने के लिए, और बड़े बड़े हैं विराट युद्ध के आयोजन के लिए।

माई ! एक ही गोले की चोट से कितने ही बड़े जहाज क्यों न हों फूट फूट कर नष्ट ! खैर, यह "लोहे का बासर घर है, जिसका ख्याल 'लखिन्दर के बाप' (बंगाली कहानी में एक पात्र) को स्वप्न में भी न आया था, और जो "सताली पर्वत" पर न जमकर सत्तर हजार पहाड़ी लहरों के सिर पर नाचता फिरता है, ये जनाबमन् भी "टारपीडो" के डर से चौकन्ने रहा करते हैं। वे हैं कुछ-कुछ चुरुट के चेहरे के एक नल। इन्हें सड़ से छोड़ देने पर वे पानी में मछली की तरह डूबे हुए चले जाते हैं। इसके बाद, जहाँ लगने का हुआ, वहाँ ज्योंही धक्का लगा कि उसी वक्त उसके भीतर से अनेकों महा-विस्तारशील पदार्थों की विकट आवाज और विस्फारण, साथ ही साथ जिस जहाज के नीचे यह कीर्ति होती है, उनका "पुनर्मू-षिको भव" अर्थात् लोहत्व में कुछ काष्ठ—कूटत्व में कुछ, और बाकी का धूमत्व और अग्नित्व में परिणमन ! वे आदमी, जो लोग इस "टारपीडो" फटने के सामने पड़ जाते हैं, उनका जो कुछ अंश खोजने से मिलता है, वह प्रायः "कीमा" की हालत में। ये सब जंगी जहाज जब से हुए तब से और ज्यादा जल-युद्ध नहीं हुए। दो ही एक लड़ाइयाँ हुईं कि एक बड़ा जंग फतह या हमेशा के लिए हार। परन्तु ऐसे जहाज लेकर, लड़ाई होने के पहले, लोग जैसा सोचते थे कि उभय पक्षों का कोई नहीं बचेगा, और बिल-कुल सब उड़ जायंगे-जल जायंगे इतना कुछ नहीं होता।

मैदाने-जंग में, तोप-बन्दूकों से दोनों पक्ष पर जिस मूसलधार से गोले गोलियाँ छूटती हैं, उसका एक हिस्सा भी अगर निशाने पर बैठ जाय तो दोनों तरफ की फौजें दो मिनट में

व्यवसायवाले जहाजों की गढ़न दूसरी तरह की होती है। यद्यपि कोई कोई व्यवसायी जहाज इस ढंग के बने होते हैं कि लड़ाई के समय थोड़ी मेहनत से ही दो तोपें बैठाकर अन्यान्य निरस्त्र पण्य-पोतों को खदेड़ खदाड़ सकते हैं और इसके लिए अन्य सरकारों से मदद पाते हैं; तथापि साधारणतः इन सब में जंगी जहाजों से बड़ा फर्क होता है। ये सब जहाज प्रायः इस समय वाष्पपोत हैं और प्रायः इतने महंगे होते हैं कि किसी कम्पनी को छोड़कर अन्य अकेले किसीके जहाज हैं ही नहीं ऐसा कहना चाहिए। हमारे देश के व्यवसाय में पी० एण्ड ओ० कम्पनी सब से प्राचीन और धनी है; इसके बाद है बी० आई० एस० एन० कम्पनी तथा और भी बहुतसी अन्य कम्पनियाँ। दूसरी सरकारों में मेसाजरी मारीतीम (फ्रासीसी), आस्ट्रिया लायड, जर्मन लायड और रुबाटिनो कम्पनियाँ (इटेलियन) बहुत प्रसिद्ध हैं। इनमें पी० एण्ड ओ० कम्पनी के यात्री-जहाज औरों की अपेक्षा निरापद और शीघ्रगामी हैं—लोगों की ऐसी धारणा है। मेसाजरी में खाने-पीने की बड़ी सुविधा है।

यात्री जहाज

हम लोग जब आये तब उन दोनों कम्पनियों ने प्लेग के डर से काले आदमियों को लेना बन्द कर दिया था और हमारी सरकार का कानून है कि कोई भी काला आदमी एमीग्रान्ट आफिस के सार्टिफिकेट बिना बाहर न जाय। अर्थात् मैं जो अपनी ही इच्छा से विदेश जा रहा हूँ, कोई मुझे भुलावा देकर कहीं बेचने के लिए या कुली बनाने के लिए नहीं

'नेटिव'

अधिक कल-पुर्जे बेकाबू हो जायँ। उसी तरह दरियाई ढंग के की उपकारिता जहाजी गोले; अगर ५०० आवाजों में एक भी वार करता तो जहाजों का नामोनिशान तक न रह जाता। आश्चर्य तो यह है कि तोपें जितना उत्कर्ष कर रही हैं,—बन्दूकें जितनी हल्की हो रही हैं,—जितने नालों की किरकिरें के प्रकार हो रहे हैं,—जितनी दूरी बढ़ रही है,—जितने भरने-ठासने के कल कब्जे बन रहे हैं, जल्द से जल्द आवाज होती है, उतनी ही गोलियाँ मानो व्यर्थ जाती हैं। पुराने ढंग का पांच हाथ लम्बा तोड़ादार "जजल" (बन्दूक) जिसे दुपाये काठ पर रखकर दागना पड़ता है, और फूंक-फांक कर आग लगा देनी पड़ती है—इतनी मदद से बरखजाई, आफीदी आदमी, अचूक निशान होते हैं और आजकल की तालीम-याफ्ता फौज अनेक किस्म के कल कारखाने वाली बन्दूकें लेकर एक ही मिनट में १५० आवाज करती हुई हवा गर्म करती रहती हैं! थोड़े-थोड़े कल पुर्जे अच्छे होते हैं। बहुत से कल पुर्जे आदमी को अक्ल का दुश्मन बना देते हैं—जड़ पिण्ड तैयार करते हैं। कल कारखानों में आदमी दिन पर दिन, रात पर रात, साल पर साल, एक ही ढर्रे का काम करते हैं—एक-एक दल, एक-एक चीज का एक एक टुकड़ा गढ़ा जा रहा है। पिनों का सिरा ही गढ़ा जा रहा है, सूत की जुड़ाई ही चल रही है, तांत के साथ आगा-पीछा ही हो रहा है, जिन्दगी भर से। फल है उस काम को भी खोना और फिर भी भोजन नहीं मिलता। जड़ की तरह इक-ढर्रा काम करते-करते जड़वत् हो जाते हैं। स्कूलमास्टरी, क्लर्की करके उसी वजह से हस्तिमूर्ख जड़पिण्ड तैयार होते हैं।

व्यवसायवाले जहाजों की गढ़न दूसरी तरह की होती है। यद्यपि कोई कोई व्यवसाई जहाज इस ढंग के बने होते हैं कि लड़ाई के समय थोड़ी मेहनत से ही दो तोपें बैठाकर अन्यान्य निरस्त्र पण्य-पोतों को खदेड़ खदेड़ सकते हैं और इसके लिए अन्य सरकारों से मदद पाते हैं; तथापि साधारणतः इन सब में जंगी जहाजों से बड़ा फर्क होता है। ये सब जहाज प्रायः इस समय वाष्पपोत हैं और प्रायः इतने महंगे होते हैं कि किसी कम्पनी को छोड़कर अन्य अकेले किसीके जहाज हैं ही नहीं ऐसा कहना चाहिए। हमारे देश के व्यवसाय में पी० एण्ट ओ० कम्पनी सब से प्राचीन और धनी है, इसके बाद है बी० आई० एस० एन० कम्पनी तथा और भी बहुतसी अन्य कम्पनियाँ। दूसरी सरकारों में मेसाजरी मारीतीम (फ्रांसीसी), आष्ट्रिया लायड, जर्मन लायड और रुबाटिनो कम्पनियाँ (इटेलियन) बहुत प्रसिद्ध हैं। इनमें पी० एण्ड ओ० कम्पनी के यात्री-जहाज औरों की अपेक्षा निरापद और शीघ्रगामी हैं—लोगों की ऐसी धारणा है। मेसाजरी में खाने-पीने की बड़ी सुविधा है।

यात्री जहाज

- -

लिए जा रहा है, यह जब उन्होंने लिख दिया तब जहाज पर मुझे लिया। यह कानून इतने दिनों तक भले आदमियों के विदेश जाने के हक में चुपचाप था; इस वक्त प्लेग के डर से जग उठा है। अर्थात् जो कोई 'नेटिव' बाहर जाय उसकी खबर सरकार को मिलती रहे। हम लोग अपने देश में सुनते रहते हैं कि हमारे भीतर अमुक भली जात है, अमुक छोटी जात। सरकार की निगाह में सब "नेटिव" हैं। महाराजा, राजा, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सब एक जात हैं—"नेटिव" कुलियों के कानून, कुलियों की जो परीक्षाएँ हैं, वे सब नेटिव के लिए हैं—धन्य हो अंग्रेज सरकार! कम से कम एक क्षण के लिए तो तुम्हारी कृपा से सब "नेटिवों" के साथ समत्व का बोध किया। खास तौर से कायस्थ-कुल में इस शरीर की पैदाइश होने के कारण मैं तो चोरी के इल्जाम पर पकड़ा गया हूँ। अब सब जातियों के मुख से सुन रहा हूँ कि वे सब पक्के आर्य हैं! सिर्फ एक दूसरे में मतभेद है—कोई चार पाव आर्य हैं, कोई एक छटाक कम, कोई आधा कच्चा, पर भी हमारी कलमुँही जात से बड़े हैं। इसमें एक राय है! और सुनता हूँ वे लोग और अंग्रेज शायद एक जात हैं—मौसेरे भाई; वे लोग काला आदमी नहीं हैं। अंग्रेजों की तरह इस देश पर दया करके आये हैं, और बाल्य-विवाह, बहुविवाह, मूर्ति-पूजन, सतीदाह, जनाना-पर्दा, आदि आदि यह सब उनके धर्म में बिल्कुल नहीं हैं। यह सब उन्हें कायस्थों-कायस्थों के बापदादों ने किया है। तथा उनका धर्म ठीक अंग्रेजों के धर्म की तरह है। उनके बाप-दादे ठीक अंग्रेजों की तरह थे;

मैंने सोचा, शायद यह वा पगड़ी और यह गुदड़ अँगरखा अजीब समझकर भाई को पसन्द नहीं आता। अच्छा तो एक अंग्रेजी कोट और टोप खरीद लाऊँ। लाया ही तो था—किसान से एक भले अमेरिकन से मुलाकात हो गई; उसने समझा दिया कि फिर भी अँगरखा अच्छा है, भले आदमी कुछ नहीं कहेंगे, परन्तु यूरोपियन पोशाक पहनने से आफत होगी—सब लोग पकड़ेंगे। और भी दो एक नाइयों उसी तरह गला धता दिया। अब अपने हाथ मूड़ना शुरू किया। भूखों आँतें ऐंठ रही थीं, तब मैं एक हलवाई की दुकान पर गया और कोई चीज माँगी पर उसने कहा "नहीं है।" "वह है तो।" "बाबाजी, सीधी भाषा यह है कि तुम्हारे लिए यहाँ बैठकर खाने की जगह नहीं है।" "क्यों बचाजी!" "तुम्हारे साथ जो खाएगा उसकी जात जायगी।" तब बहुत कुछ अमेरीका देश भी अपने देश की तरह अच्छा लगने लगा। हटाओ झमेला सिहाय और सफेद का, और इन 'नेटिवों' के बीच वे पाच पाव आधे खून है, ये चार पाव, वे डेढ़ छटाँक कम, ये आधी छटाँक अध-कचे आदि आदि। "छछुन्दर का गुलाम चमगादर। उसकी तनखाह साढ़े तीन रुपया।" एक डोम कहा करता था, "हमसे बड़ी जात दुनिया में कोई है भी ? हम लोग हैं डो-ओ-ओ-म्!" लेकिन मज़ा भी देखा ?—जात के नखरे—जहाँ गाँववाले नहीं मानते, वहाँ भी आप मेहमान बने हुए हैं।

वाष्प-पोत वायु-पोत की अपेक्षा बहुत बड़ा होता है जो सब वाष्प-पोत अटलाण्टिक पार करते हैं, वे सब, एक एक

यात्रियों का हमारे इस गोलकुण्डा* जहाज के ठीक ब्योरे श्रेणी-विभाग है। जिस जहाज के द्वारा जापान से पैसिफिक पार किया गया था, वह भी बहुत बड़ा था। बहुत बड़े बड़े जहाजों में रहती है पहली श्रेणी, दोनों ओर कुछ खाली जगह, उसके बाद दूसरी श्रेणी, और "स्टीयरेज" इधर-उधर। एक दूसरी हद में खलासियों और नौकरों के रहने की जगह है। "स्टीयरेज" उसे तीसरी श्रेणी हो, उसमें वही लोग जाते हैं जो बहुत गरीब हैं—जो अमेरिका, आस्ट्रेलिया आदि देशों में उपनिवेश स्थापित करने जा रहे हैं। उनके रहने की जगह बहुत साधारण है और हाथ ही पर उन्हें खाने को दिया जाता है। जो सब जहाज हिन्दुस्तान और विलायत के बीच आते जाते हैं, उनमें "स्टीयरेज" नहीं है, परन्तु डेक-यात्री हैं। पहले और दूसरे दर्जे के बीच खुली जगह है, वहाँ वे लोग बैठते और सोते हैं। लेकिन दूर की यात्रा करनेवाला ऐसा एक भी जहाज मुझे नहीं मिला। सिर्फ १८९२ ई० में चीन जाने के समय बम्बई से कुछ चीनी लोग बराबर हांकांग तक डेक पर गये थे।

तूफान उठने पर डेक के यात्रियों को बड़ी तकलीफ होती है और कुछ तकलीफ बन्दर में माल उतारने के समय। सिर्फ 'गोलकुण्डा जहाज' ऊपर के "हरीकेन" डेक को छोड़कर और सब डेकों पर एक बड़ा सा चौकोर कटाव रहता है, उसीके बीच से माल उतारते और चढ़ाते हैं, उसी समय डेक-

* एक जहाज का नाम। इस जहाज द्वारा श्री स्वामी जी ने द्वितीय बार विलायत की यात्रा की थी।

यात्रियों को थोड़ी सी तकलीफ मिलती है। नहीं तो कलकत्ते से स्वेज तक और गर्मी के दिनों में योरप में भी डेक पर बड़ा आराम रहता है। जब पहले और दूसरे दर्जे के यात्री, अपने सजे सजाये हुए कमरे के अन्दर गर्मी के मारे मोम की तस्वीर खिंचे रहते हैं, उस समय डेक जैसे स्वर्ग बन रहा हो। इन सब जहाजों का दूसरा दर्जा बड़ा ही वाहियात रहता है। सिर्फ एक नई जर्मन लायड कम्पनी हुई है, जर्मनी के ब्रोमेन नामक शहर से आस्ट्रेलिया जाती है, उसका दूसरा दर्जा बड़ा सुन्दर है, यहाँ तक कि 'हरिकेन' के डेक में भी कमरे हैं और खाने-पीने का इन्तजाम करीब-करीब "गोलकुण्डा" के पहले दर्जे की तरह। वह लाइन कोलम्बो छूती हुई जाती है। इस "गोलकुण्डा" जहाज के 'हरिकेन' डेक पर सिर्फ दो कमरे हैं, एक इस तरफ, एक उस तरफ। एक में डाक्टर रहते हैं, एक हम लोगों को मिला था। लेकिन गर्मी के डर से हम लोग नीचे वाले मंजले में भाग आये। वह कमरा जहाज के इञ्जिन के ऊपर है। जहाज लोहे का होने पर भी यात्रियों के कमरे काठ के हैं। ऊपर-नीचे, उन काठ की दीवारों से वायु संचार होते रहने के लिए बहुत से छिद्र कर दिये गये हैं। दीवारों में "आइवरी पेण्ट" लगा हुआ है। एक-एक कमरे में इसके लिए करीब-करीब पचीस पौण्ड खर्च पड़ा है। कमरे के भीतर एक छोटा सा कार्पेट बिछा हुआ [illegible]क दीवार से बिना पाये की दो लोहे की खाटें जैसी [illegible]र जड़ दी गई हैं, एक के ऊपर और एक। दूसरी दीवार [illegible] एक वैसी ही चीज जड़ी हुई है। दरवाजे के ठीक उल्टी

तरफ हाथ धोने की जगह है। उसके ऊपर एक आईना, दो बोतलें और पानी पीने के दो ग्लास। हर बिछौने के भीतरी तरफ एक-एक लम्बा जाल पीतल के फ्रेम से लगा हुआ है, वह जाल फ्रेम के साथ दीवाल के अन्दर चला जाता है, और खींचने से फिर उतर आता है। रात को यात्री लोग अपनी घड़ी आदि जरूरी चीजें उसमें रखकर सोते हैं। बिछौने के नीचे सन्दूक-पिटारे आदि के रखने की जगह है। सेकेण्ड क्लास का ढांचा भी यहीं है, सिर्फ जगह संकीर्ण है और चीजें व्यर्थ की। जहाजी कारोबार पर प्रायः अंग्रेजों का एकाधिकार हो गया है, इसलिए और और जातियों ने जो सब जहाज तैयार किये हैं, उनमें भी चूँकि अंग्रेज-यात्रियों की संख्या अधिक होती है, इसलिए खानपान का प्रबन्ध बहुत कुछ अंग्रेजी ढंग से ही रखना पड़ता है। समय भी अंग्रेजी तरफ का कर लेना पड़ता है। इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी तथा रूस में खान-पान का समय अलग अलग है। जैसे हमारे भारतवर्ष में बंगाल, यू॰ पी॰, महाराष्ट्र, गुजरात तथा मद्रास आदि में है, परन्तु यह सब कम देख पड़ता है। अंग्रेजी बोलने वाले यात्रियों की संख्या बढ़ती हुई देखकर अंग्रेजी ढंग भी बढ़ते जा रहे हैं।

अर्णव-पोत के सर्वेसर्वा मालिक हैं कप्तान। पहले "हाई सी"* में कप्तान लोग जहाज पर राज्य करते थे, किसी को भी पकड़कर

---

* जहाँ समुद्र का किनारा नहीं सूझता या जहाँ से नजदीक का किनारा कम से कम दो तीन दिन की राह है।

यात्रियों को थोड़ी सी तकलीफ मिलती है। नहीं तो कलकत्ते से स्वेज तक और गर्मी के दिनों में योरप में भी डेक पर बड़ा आराम रहता है। जब पहले और दूसरे दर्जे के यात्री, अपने सजे सजाये हुए कमरे के अन्दर गर्मी के मारे मोम की तस्वीर खिंचे रहते हैं, उस समय डेक जैसे स्वर्ग बन रहा हो। इन सब जहाजों का दूसरा दर्जा बड़ा ही वाहियात रहता है। सिर्फ एक नई जर्मन लायड कम्पनी हुई है, जर्मनी के बर्लिन नामक शहर से आस्ट्रेलिया जाती है, उसका दूसरा दर्जा बड़ा सुन्दर है, यहाँ तक कि 'हैरिकेन' के डेक में भी कमरे हैं और खाने-पीने का इन्तजाम करीब-करीब "गोलकुण्डा" के पहले दर्जे की तरह। वह लाइन कोलम्बो छूती हुई जाती है। इस "गोलकुण्डा" जहाज के 'हैरिकेन' डेक पर सिर्फ दो कमरे हैं, एक इस तरफ, एक उस तरफ। एक में डाक्टर रहते हैं, एक हम लोगों को मिला था। लेकिन गर्मी के डर से हम लोग नीचे वाले मंजले में भाग आये। वह कमरा जहाज के इञ्जिन के ऊपर है। जहाज लोहे का होने पर भी यात्रियों के कमरे काठ के हैं। ऊपर-नीचे, उन काठ की दीवारों से वायु संचार होते रहने के लिए बहुत से छिद्र कर दिये गये हैं। दीवारों में "आइवरी पेण्ट" लगा हुआ है। एक-एक कमरे में इसके लिए करीब-करीब पचीस पौण्ड खर्च पड़ा है। कमरे के भीतर एक छोटा सा कार्पेट बिछा हुआ है। एक दीवार से बिना पाये की दो लोहे की खाटें जैसी सटाकर जड़ दी गई हैं, एक के ऊपर और एक। दूसरी दीवार से भी एक वैसी ही चीज जड़ी हुई है। दरवाजे के ठीक उल्टी

साफ हाथ धोने की जगह है। उसके ऊपर एक आईना, दो बोतलें और पानी पीने के दो ग्लास। हर बिछौने के भीतरी तरफ एक-एक लम्बा जाल पीतल के फ्रेम से लगा हुआ है, वह जाल फ्रेम के साथ दीवाल के अन्दर चला जाता है, और खींचने से फिर उतर आता है। रात को यात्री लोग अपनी घड़ी आदि जरूरी चीजें उसमें रखकर सोते हैं। बिछौने के नीचे सन्दूक-पिटारे आदि के रखने की जगह है। सेकेण्ड क्लास का ढांचा भी यही है, सिर्फ जगह संकीर्ण है और चीजें व्यर्थ की। जहाजी कारोबार पर प्रायः अंग्रेजों का एकाधिकार हो गया है, इसलिए और और जातियों ने जो सब जहाज तैयार किये हैं, उनमें भी चूंकि अंग्रेज-यात्रियों की संख्या अधिक होती है, इसलिए खानपान का प्रबन्ध बहुत कुछ अंग्रेजी ढंग से ही रखना पड़ता है। समय भी अंग्रेजी तरफ का कर लेना पड़ता है। इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी तथा रूस में खान-पान का समय अलग अलग है। जैसे हमारे भारतवर्ष में बंगाल, यू० पी०, महाराष्ट्र, गुजरात तथा मद्रास आदि में है, परन्तु यह सब कम देख पड़ता है। अंग्रेजी बोलने वाले यात्रियों की संख्या बढ़ती हुई देखकर अंग्रेजी ढंग भी बढ़ते जा रहे हैं।

बाष्प-पोत के सर्वेसर्वा मालिक हैं कप्तान। पहले "हाई सी"* में कप्तान लोग जहाज पर राज्य करते थे, किसी को भी पकड़कर

* जहाँ समुद्र का किनारा नहीं सूझता या जहाँ से नजदीक का किनारा कम से कम दो तीन दिन की राह है।

देनी है। हर "मेस" के खाना पकाने की एक जगह है। कलकत्ते से कुछ हिन्दू डेकयात्री कोलम्बो जा रहे थे, वे लोग उसी कमरे में नौकरों का भोजन पक जाने पर अपना भोजन पका लिया करते थे। नौकर लोग पानी भी खुद ही भर कर पीते हैं। हर डेक में दीवार के दोनों तरफ दो पम्प हैं; एक खारे पानी का, दूसरा मीठे का। वहाँ से मीठा जल भरकर मुसलमान लोग इस्तेमाल करते हैं। जिन हिन्दुओं को कल के पानी से कोई ऐतराज नहीं है उनके लिए खाने पीने का सम्पूर्ण विचार रखकर इन सब जहाजों पर विलायत आदि देशों में जाना बहुत सीधा है। भोजन पकाने का घर मिलता है, किसी का छूआ पानी नहीं पीना पड़ता, नहाने का पानी भी किसी दूसरी जाति के छूने की जरूरत नहीं रह जाती। चावल, दाल, शाक-पात, मछली, दूध, घी सभी कुछ जहाज पर मिलता है। खास कर इन सब जहाजों में देशी आदमियों के काम करने के कारण, दाल, चावल, मूली, गोभी, आलू आदि हर रोज उनको लिए निकाल देना पड़ता है। चाहिए सिर्फ—"पैसा"। पैसा रहने से कुल आचार-विचार रखकर भी यात्रा की जा सकती है।

ये सब बंगाली आजकल प्रायः उन सब जहाजों पर रहते हैं जो कलकत्ते से योरोप जाते हैं। क्रमशः इनकी एक जाति तैयार हो रही है। कुछ जहाजी पारिभाषिक शब्दों की भी सृष्टि हो रही है। कप्तान को ये लोग कहते हैं—"बाड़ीवाला", अफिसर को—"मालिम", मस्तूल को—

जहाजी खलासी

देशी मल्लाह लोग जो काम करते हैं, वह बहुत अच्छा है। जबान पर एक बात भी नहीं, पर उधर तनख्वाह गोरों की चौथाई। विलायत में बहुतेरे असन्तुष्ट रहते हैं; खास कर इस लिए कि बहुत से गोरों की रोटियाँ जाती हैं। वे लोग कभी कभी हंगाम उठाते हैं। कहना तो और कुछ है नहीं, क्योंकि काम में ये गोरों से फुर्तीले होते हैं। परन्तु कहते हैं, तूफान उठने पर, जहाज विपत्ति में पड़ने पर, इनमें हिम्मत नहीं रहती। सीताराम सीता! विपत्ति के समय दिखलाई देता है, यह बदनामी झूठ है। विपत्ति के समय गोरे भय से शराब पीकर, जकड़ कर, निकम्मे हो जाते हैं। देशी खलासियों ने एक बूंद भी शराब जिन्दगी भर नहीं पी, और अब तक किसी महाविपत्ति के अवसर पर एक आदमी ने भी कायरता नहीं दिखाई। अजी, देशी-सिपाही भी कभी कायरता दिखलाता है! परन्तु नेता चाहिए। जनरल स्ट्राङ्ग नाम के एक अंग्रेज मित्र सिपाही-विद्रोह के समय इस देश में थे। वे गदर की कहानी बहुत कहते थे। एक दिन बातों ही बातों में पूछा गया कि सिपाहियों के साथ इतनी तोपें, बारूद, रसद थी, और वे शिक्षित तथा दूरदर्शी थे। फिर वे इस तरह क्यों हार भागे! उन्होंने उत्तर दिया, उसमें जो लोग नेता हुये थे, वे सब बहुत पीछे से "मारो बहादुर", "लड़ो बहादुर" कह कहकर चिल्ला रहे थे। स्वयं आफिसर के आगे बढ़े बिना तथा मौत का सामना किये बिना कहीं सिपाही लड़ते हैं! सब कामों में ऐसा ही हाल है। "सिरदार तो सरदार"; सिर दे सको तो नेता हो। हम सब लोग धोखा देखकर नेता होना

नेता अथवा सरदार कौन हो सकता है?

"होल", पाल को—"सड", उतारो—"आरिया", उठाओ—"हाविस" (Heave) आदि।

खलासियों और कोयलेवालों में एक आदमी सरदार रहता है, उसे "सारंग" कहते हैं, उसके नीचे दो तीन "टंडेल", इसके बाद खलासी या कोयलेवाला।

खानसामा लोगों (Boy) के सरदार को "बटलर" (Butler) कहते हैं; उसके ऊपर एक आदमी गोरा, "स्टूअर्ड" होता है। खलासी लोग जहाज धोना-पोंछना, रस्सी फेंकना-उठाना, नाव उतारना-चढ़ाना, पाल गिराना-उठाना (यद्यपि वाष्पपोतों में यह काम यदाकदा होता है,) आदि काम करते हैं। सारंग और टंडेल सदा ही साथ-साथ फिरते और काम करते हैं। कोयलेवाले इञ्जिन-घर में आग ठीक रखते हैं; उनका काम दिनरात आग से लड़ते रहना है, और इञ्जिन को पोंछकर साफ़ रखना। वह विराट इञ्जिन और उसकी शाखा-प्रशाखाएँ साफ रखना कोई साधारण काम है! "सारंग" और उसका "भाई" असिस्टण्ट "सारंग" कलकत्ते के आदमी हैं, बंगला बोलते हैं, बहुत कुछ भले आदमियों की तरह लिख पढ़ सकते हैं, स्कूल में पढ़े हुए, काम चलाने भर की अंग्रेजी भी बोल लेते हैं - "सारंग" का लड़का कप्तान का नौकर है—दरवाजे पर रहता है, अरदली है। इन सब बंगाली खलासी, कोयलेवाले, खानसामे आदि का काम देखकर स्वजाति पर जो एक निराशा की बुद्धि थी वह बहुत कुछ घट गई है। ये लोग कैसे धीरे-धीरे आदमी बन रहे हैं, कैसे तन्दुरुस्त, कैसे निडर फिर भी शान्त। वह नेटिवी पैरपोशी का भाव मेहतरों में भी नहीं, कैसा परिवर्तन!

देशी मल्लाह लोग जो काम करते हैं, वह बहुत अच्छा है। जबान पर एक बात भी नहीं, पर उधर तनख्वाह गोरों की चौथाई। विलायत में बहुतेरे असन्तुष्ट रहते हैं; खास कर इस लिए कि बहुत से गोरों की रोटियाँ जाती हैं। वे लोग कभी कभी हंगाम उठाते हैं। कहना तो और कुछ है नहीं, क्योंकि काम में ये गोरों से फुर्तीले होते हैं। परन्तु कहते हैं, तूफ़ान उठने पर, जहाज़ विपत्ति में पड़ने पर, इनमें हिम्मत नहीं रहती। सीताराम सीता! विपत्ति के समय दिखलाई देता है, यह बदनामी झूठ है। विपत्ति के समय गोरे भय से शराब पीकर, जकड़ कर, निकम्मे हो जाते हैं। देशी खलासियों ने एक बूंद भी शराब जिन्दगी भर नहीं पी, और अब तक किसी महाविपत्ति के अवसर पर एक आदमी ने भी कायरता नहीं दिखाई। अजी, देशी-सिपाही भी कभी कायरता दिखलाता है! परन्तु नेता चाहिए। जनरल स्ट्रांग नाम के एक अंग्रेज मित्र सिपाही-विद्रोह के समय इस देश में थे। वे गदर की कहानी बहुत कहते थे। एक दिन बातों ही बातों में पूछा गया कि सिपाहियों के साथ इतनी तोपें, बारूद, रसद थी, और वे शिक्षित तथा दूरदर्शी थे। फिर वे इस तरह क्यों हार भागे! उन्होंने उत्तर दिया, उसमें जो लोग नेता हुये थे, वे सब बहुत पीछे से "मारो बहादुर", "लड़ो बहादुर" कह कहकर चिल्ला रहे थे! स्वयं आफिसर के आगे बढ़े बिना तथा मौत का सामना किये बिना कहीं सिपाही लड़ते हैं! सब कामों में ऐसा ही हाल है। "सिरदार तो सरदार"; सिर दे सको तो नेता हो। हम सब लोग धोखा देखकर नेता होना

नेता अथवा सरदार कौन हो सकता है?

चाहते हैं; इसीसे कुछ होता नहीं, कोई मानता भी नहीं।

आर्य बाबा का दम भरते हुए चाहे प्राचीन भारत-गौरव-घोषणा दिन रात करते रहो और कितना भी "डमडम्" कहकर गाल बजाओ, तुम लोग हो दस हजार वर्ष पीछे के ममी !! जिन्हें "चलायमान श्मशान" कहकर तुम्हारे पूर्वपुरुषों ने घृणा की है, भारत में जो कुछ वर्तमान जीवन है, वह उन्हींमें, और "चलायमान श्मशान" हो तुम लोग। तुम्हारे घरद्वार म्युज़ियम हैं, तुम्हारे आचार-व्यवहार, चाल-चलन देखने से जान पड़ता है बड़ी दीदी के मुँह से कहानियाँ सुन रहा हूँ! तुम्हारे साथ प्रत्यक्ष वार्तालाप करके भी, घर लौटता हूँ तो जान पड़ता है, चित्रशाला में तस्वीरें देख आया। इस माया के संसार की असली प्रहेलिका, असली मरु-मरीचिका तुम लोग हो भारत के उच्चवर्णवाले। तुम लोग भूत काल हो, लङ्, लुङ्, लिट्, सब एक साथ। वर्तमान काल में तुम्हें देख रहा हूँ, इससे जो अनुभव हो रहा है वह अजीर्णता-जनित दुःस्वप्न है। भविष्य के तुम लोग शून्य हो, इत् लोप् लुप्। स्वप्नराज्य के आदमी हो तुम लोग, अब देर क्यों कर रहे हो ? भूत-भारत-शरीर के रक्त-मांस-हीन कंकालकुल तुम लोग क्यों नहीं जल्दी से जल्दी धूलि में परिणत हो वायु में मिल जाते ? तुम लोगों की अस्थिमय उंगलियों में पूर्वपुरुषों की संचित कुछ अमूल्य रत्नाङ्गुरीय हैं, तुम्हारे दुर्गन्धित शरीरों को भेंटती हुई पूर्व काल की बहुतसी रत्नपेटिकाएँ सुरक्षित हैं। इतने दिनों उन्हें दे देने की सुविधा नहीं मिली। अब अंग्रेजी राज्य में, अबाध

भारत के उच्च वर्ण मृतप्राय एवं नीच वर्ण जीवित हैं

विदा-चर्चा के दिनों में, उन्हें उत्तराधिकारियों को दो, जितने शीघ्र दे सको दे दो। तुम लोग शून्य में विलीन होजाओ और फिर एक नवीन भारत निकल पड़े। निकले हल पकड़ कर, किसानों की कुटी भेद कर, जाली माली, मोची, मेहतरों की झोपड़ियों से। निकल पड़े बनियों की दूकानों से, भुजवा के भाड़ के पास से, कारखाने से, हाट से, बाजार से। निकले झाड़ियों, जंगलों, पहाड़ों, पर्वतों से। इन लोगों ने सहस्र सहस्र वर्ष अत्याचार सहन किया है,—उससे पाई है अपूर्व सहिष्णुता। सनातन दुःख उठाया, जिससे पाई है अटल जीवनी शक्ति। ये लोग मुट्ठीभर सत्तू खाकर दुनिया उलट दे सकेंगे। आधी रोटी मिली तो तीनों लोक में इतना तेज न अटेगा! ये रक्तबीज के प्राणों से युक्त हैं। और पाया है सदाचार बल, जो तीनों लोक में नहीं है। इतनी शान्ति, इतनी प्रीति, इतना प्यार, जवान होकर दिनरात इतना खटना और काम के वक्त सिंह का विक्रम!! अतीत के कंकाल-समूह!—यही है तुम्हारे सामने तुम्हारा उत्तराधिकारी भविष्य भारत। वे तुम्हारी रत्नपेटिकायें, तुम्हारी मणि की अंगूठियाँ—, फेंक दो इनके बीच; जितना शीघ्र फेंक सको, फेंक दो; और तुम हवा में विलीन हो जाओ, अदृश्य हो जाओ, सिर्फ कान खड़े रखो। तुम ज्योंही विलीन होगे, उसी वक्त सुनोगे, कोटिजीमूतस्यन्दिनी, त्रैलोक्य-कंपनकारिणी भविष्य भारत की उद्बोधन ध्वनि "वाह गुरु की फतेह!"

भारतवर्ष के भावी जीवन का निर्माण

जहाज बङ्गोपसागर में जा रहा है। यह समुद्र, कहते हैं

बड़ा गम्भीर है। जितने में कम पानी था, उतना तो गङ्गाजी ने हिमालय चूर कर, मिट्टी लाकर बोझकर, जमीन कर दिया है। वही जमीन हमारा वङ्ग देश है, बंगाल अब बहुत आगे नहीं बढ़ने का। बस उसी सुन्दर-वन तक। कोई कोई कहते हैं, पहले सुन्दर-बन नगर और ग्रामों से आबाद था, ऊँचा था। बहुतसे लोग अब यह बात नहीं मानना चाहते। कुछ हो, उस सुन्दर-बन के भीतर और बंगोपसागर की उत्तर ओर बहुतसे कारखाने हो गये हैं, इन्हीं सब स्थानों में पोर्तुगीज डाकुओं ने अड्डे जमाये थे। आराका के राजा ने इन सब जगहों के अधिकार की अनेक चेष्टाएँ कीं। मुगल-प्रतिनिधि ने 'गंगालेज'-प्रमुख पोर्तुगीज डाकुओं पर शासन करने के अनेक उद्योग किये। बारम्बार क्रिश्चियन, मुगल, मग और बंगालियों की लड़ाइयाँ हुईं।

बङ्गाल का उपसागर

एक तो ऐसे ही बंगोपसागर स्वभावतः चञ्चल है। तिस पर यह है वर्षाकाल, मानसून का समय, जहाज खूब हिलता-डुलता हुआ जा रहा है! परन्तु अभी तो आरंभ ही हुआ है, भगवान् जाने, भविष्य में क्या है। मद्रास जा रहा हूँ। इस दाक्षिणात्य का अधिक भाग ही अब मद्रास प्रान्त है। जमीन से क्या होता है! भाग्यवान के हाथों पड़कर मरुभूमि भी स्वर्ग बन जाती है। नगण्य क्षुद्र मद्रास शहर जिसका नाम चिनपट्टनम् अथवा मद्रासपटनम् था, चन्द्रगिरि के राजा ने एक वणिक-दल को बेचा था, तब अंग्रेजों का व्यवसाय जावा में था। बान्तम शहर अंग्रेजों का एशिया के वाणिज्य का केन्द्र था। मद्रास

दक्षिणी ढंग

आदि भारतवर्ष की अंग्रेजी कंपनियों के सब वाणिज्य केन्द्र वान्ताम द्वारा परिचालित होते थे। वह वान्ताम अब कहाँ है ? और वह मद्रास अब किस रूप में बदल गया। सिर्फ "उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः"। क्या यही है न भाई साहब ? पीछे है "माता का बल"; परन्तु उद्योगी पुरुष को ही माता बल देती है, यह बात भी मानता हूँ। मद्रास की याद आते ही खालिश दक्षिण मुल्क याद आता है। कलकत्ते के जगन्नाथघाट पर ही दक्षिण मुल्क के आसार नजर आते हैं। यह किनारे से घुटा सर, चोटी-बंधा सिर, कपाल मानो चित्र-वैचित्र से पूर्ण, मुँड उल्टी चट्टियाँ (स्लीपर) जिनमें सिर्फ पैर की अंगुलियाँ ही जाती हैं, और नस्य (सुंघनी)—विगलित-नासा, लड़कों के सर्वाङ्ग में चन्दन के छापे लगाने में बड़े पटु, उड़िया ब्राह्मण को देखकर। गुजराती ब्राह्मण, काले कलूटे देशवाले ब्राह्मण, बिलकुल साफ गोरे मार्जारचक्षु, चौकोर सिर कोंकन के ब्राह्मण, यद्यपि इनमें सबके एक ही प्रकार के वेश हैं, सभी दक्षिणी नाम से परिचित हैं; परन्तु ठीक दक्षिणी ढंग मद्रासियों में है। वह रामानुजी-तिलक, परिव्याप्त ललाट-मण्डल, दूर से जैसे खेत की रखवाली के लिए काली हण्डी में चूना पोतकर जले काठ के सिरे में किसी ने टांग दिया हो (जिस रामानुजी तिलक के शागिर्द रामानन्दी तिलक की महिमा के सम्बन्ध में कहते हैं—"तिलक तिलक सब कोई कहै (पर) रामानन्दी तिलक। दीखत गङ्गा-पार से यम गौद्वारा खिड़क्।") हमारे देश के चैतन्य-सम्प्रदाय के किसी गोसाईं को सर्वाङ्ग में छाप लगाये हुए देखकर एक मतवाले ने चिता समझा था, पर इस मद्रासी तिलक

को देखकर तो चिता भी पेड़ पर चढ़ जाता है! वह तामिल तेलेगु, मलयालम बोली जिसे छः साल सुनने पर भी क्या मजाल जो एक शब्द भी समझ लो, जिसमें दुनिया के तरह तरह के "लकार" और "डकारों" की नुमाइश है; वह "मुड़गतान्नि रसम्"* के साथ भात "सापड़न"—जिसके एक एक ग्रास से कलेजा थर्रा उठता (इतना तीखा और इमली-मिला!) वह "मीठे नीम के लच्छे, चने की दाल, मूंग की दाल", छौंकी हुई दध्योदन आदि भोजन; और वह अण्डी का तेल लगाकर स्नान, अण्डी के तेल में मछली भूनना,—इसके बिना क्या कहीं दक्षिण मुल्क होता है!

दाक्षिणात्यों का धर्मगौरव

पुनश्च, यही दक्षिण मुल्क है जिसने मुसलमान-राज्य के समय और उसके कितने समय पहले से भी हिन्दू-धर्म को बचा रखा है। इस दक्षिण मुल्क में ही—सामने शिखा, इस नारियल तेल खानेवाली जाति में,—शंकराचार्य का जन्म हुआ; इसी देश में रामानुज पैदा हुए थे, यही मध्वमुनि की जन्मभूमि है। इन्हीं के पैरों के नीचे वर्तमान हिन्दूधर्म है। तुम्हारा चैतन्य-सम्प्रदाय इस मध्वसम्प्रदाय की शाखामात्र है; उसी शंकर की प्रतिध्वनि कबीर, दादू, नानक, रामसनेही आदि सब लोग हैं; उसी रामानुज के शिष्यसम्प्रदाय अयोध्या आदि दखल कर बैठे हुए हैं। ये दक्षिणी ब्राह्मण हिन्दु-

---

* अत्यन्त तीखी इमली मिली अरहर की दाल का रस। यह दक्षिणियों का प्रिय भोजन है। मुड़ग अर्थात् काली मिर्च और तन्नि अर्थात् जल।

म्नानी मानत को स्वीकार नहीं करते, शिष्य नहीं करना चाहते, अभी तक संन्यास नहीं देते थे, यही मद्रासी इस समय तक बड़े बड़े तीर्थस्थान दखल कर बैठे हुए हैं। इस दक्षिण-देश में ही—जिस समय उत्तर भारतवासी "अल्लाहो अकबर, दीन दीन" शब्द के सामने भय से धन-रत्न, ठाकुर-देवता, स्त्री-पुत्रों को छोड़कर झाड़ियों और जंगलों में छिप रहे थे—राजचक्रवर्ती विद्यानगराधिप का अचल सिंहासन प्रतिष्ठित था। इस दक्षिण देश में ही उस अद्भुत सायन का जन्म हुआ है जिनके यवन-विजयी बाहुबल से बुक्कराज का सिंहासन, मंत्रणा द्वारा विद्यानगर साम्राज्य और नय-मार्ग से दाक्षिणात्य की सुख-स्वच्छन्दता प्रतिष्ठित रही—जिनकी अमानव प्रतिभा द्वारा और अलौकिक श्रम के फलस्वरूप समग्र वेदराशि पर टीकाएँ हुईं, जिनके अद्भुत त्याग, वैराग्य और गवेषणा के फल-स्वरूप पंचदशी ग्रन्थ बना, उन्हीं संन्यासी विद्यारण्य मुनि सायन* की यह जन्मभूमि है। यह मद्रास उस तामिल जाति की वासभूमि है जिनकी सभ्यता सर्व प्राचीन है, जिनके 'सुमेर' नामक शाखा ने युफ्रेटिस के तट पर प्रकाण्ड सभ्यता का विस्तार बहुत प्राचीन काल में किया था—जिनकी ज्योतिष, धर्मकथाएँ, नीतियाँ, आचार आदि आसिरी और बाबिली सभ्यता की भित्ति हैं—जिनका पुराण-संग्रह बाइबिल का मूल है—जिनकी एक और शाखा ने मलाबार उपकूल होकर अद्भुत मिसरी सभ्यता की सृष्टि की थी—जिनके प्रति आर्यगण

* किसी किसी के मत से वेदभाष्यकार सायन विद्यारण्यमुनि के भ्राता थे।

/

अनेक विषयों में ऋणी हैं। इन्हींके बड़े बड़े मन्दिर दाक्षिणात्य में वीर-शैव या वीर-वैष्णव सम्प्रदाय की विजयघोषणा कर रहे हैं। यह जो इतना बड़ा वैष्णव धर्म है, यह भी इसी "तामिल" नीचवंशोद्भुत 'शठकोप' से उत्पन्न हुआ है जो "विक्रीय सूर्प स चचार योगी" हैं। यही तामिल आल्वाड़ या भक्तगण अब भी समग्र वैष्णव सम्प्रदाय के पूज्य हो रहे हैं। अब भी इस देश में वेदान्त के द्वैत, विशिष्ट तथा अद्वैत आदि मतों की जैसी चर्चा है, ऐसी और कहीं नहीं। अब भी धर्म पर अनुराग इस देश में जितना प्रबल है, वैसा और कहीं नहीं।

२४ वीं जून की रात को हमारा जहाज मद्रास पहुँचा। प्रातःकाल उठकर देखता हूँ समुद्र के भीतर चारदीवारी से घेरे हुए मद्रास के बन्दर में हूँ। भीतर का जल स्थिर है और बाहर उत्ताल तरंगें गरज रही हैं और एक एक बार बन्दर की दीवार से लगकर दस-बारह हाथ उछल पड़ती हैं; फिर फेनमय होकर छितर जाती हैं। सामने सुपरिचित मद्रास का स्ट्रैण्ड रोड है। दो पुलिस-इन्स्पेक्टर, एक मद्रासी जमादार, एक दर्जन पहरेवाले जहाज पर चढ़े। बड़ी सभ्यता के साथ मुझसे कहा कि, काले आदमियों को किनारे जाने का हुक्म नहीं, गोरों को है। काला कोई भी हो, वह गंदा रहता है और उसके प्लेगपरमाणु लेकर घूमने की बड़ी ही सम्भावना है। परन्तु मेरे लिए मद्रासियों ने विशेष हुक्म पाने की दरख्वास्त की थी, शायद मंजूरी मिली हो। क्रमशः दो दो चार चार करके मद्रासी मित्र नाव पर चढ़कर जहाज के पास आने लगे।

मद्रास तथा मित्रों की अभ्यर्थना

परन्तु छुआछूत की गुंजाइश नहीं, जहाज ही से बातें करो। आलासिंगा, बिलीगिरी, नरसिंहाचार्य, डाक्टर नंजनराव, कीडी आदि सब मित्रों पर नजर पड़ी। आम, केले, नारियल, पका हुआ दध्योदन, राशि राशि गजा (एक प्रकार की मिठाई), नमकीन आदि आदि के बोझे आने लगे। क्रमशः भीड़ होने लगी—आबाल-वृद्ध-वनिता, नाव पर नावें डट गईं। मेरे विलायत के मित्र मि० श्यामीएर, बैरिस्टर होकर मद्रास आ गये हैं, उन्हें भी देखा। रामकृष्णानंद और निर्भय कई बार आये गये। उन लोगों को दिन-भर उसी कड़ी धूप में नाव पर ही रहने का था—अन्त में डांटने पर गये। क्रमशः जितनी खबर बढ़ी कि मुझे उतरने की मंजूरी नहीं दी जायगी, उतनी ही नाव की भीड़ बढ़ने लगी। मेरा शरीर भी जहाज के बरामदे में टेस देकर लगातार खड़े रहने से क्रमशः अवसन्न होने लगा। तब मद्रासी मित्रों से मैंने विदा माँगी, कैबिन के भीतर प्रवेश किया। आलासिंगा को "ब्रह्मवादिन्" और मद्रासी कामकाज के बारे में सलाह करने का अवसर नहीं मिला, इसलिए वह कोलम्बो तक जहाज पर चले। शाम के वक्त जहाज छूटा। उस समय एक शोर उठा। झरोखे से झाँककर देखता हूँ, एक हजार के करीब मद्रासी स्त्री-पुरुष-बालक-बालिकाएँ, बन्दर के बांध पर बैठी हुई थीं—जहाज छोड़ते ही, वे ही यह विदासूचक ध्वनि कर रही थीं। आनन्द होने पर बंगदेश के समान मद्रासी लोग " " ध्वनि करते हैं।

मद्रास से कोलम्बो चार दिन। जो तरंग-भंग गंगासागर से शुरू हुए थे, वे क्रमशः बढ़ने लगे। मद्रास के बाद और भी

तरह की रहनसहन है। योरप में औरतों के लिए पैर नंगा करना बड़े शर्म की बात है, लेकिन ऊपर की आधी देह भले ही नंगी रहे! हमारे देश में सिर ढकना होगा ही, चाहे पहनने भर को घाघरा भले ही न जुटे! आलासिंगा पेरुमल, एडीटर "ब्रह्मवादिन," मैसूरी रामानुजी "रसम्" खाने वाला ब्राह्मण है। घुटा सिर, तमाम ललाट "तेंकलौ" तिलक, साथ का सहारा, छिपाकर बड़े यत्न से लाये हैं' क्या, ये दो गठरियाँ! एक में चूड़ा भूने हुए और एक में लाई-मटर! जात बचाकर, यही लाई-मटर चबाते हुए सीलोन जाना होगा! आलासिंगा एक बार और सीलोन गया था। इसीसे बिरादरीवालों ने कुछ गुलगपाड़ा मचाना चाहा था; पर कामयाब न हो सके थे। भारतवर्ष में इतना ही बचाव है! बिरादरीवालों ने अगर कुछ न कहा तो और किसी के भी कुछ कहने का अधिकार नहीं। और वह दक्षिणी बिरादरी—किसी में हैं कुल पांच सौ, किसी में सात सौ, किसी में हजार प्राणी—लड़की कोई न मिली तो भाञ्जी को ब्याह लिया! जब मैसूर में पहले पहल रेल हुई, तो जो ब्राह्मण दूर से रेलगाड़ी देखने गये थे, वे सब बेजात कर दिये गये। कुछ हो, इस आलासिंगा की तरह आदमी संसार में बहुत थोड़े हैं; ऐसा निःस्वार्थ, ऐसा जीतोड़ मेहनत करनेवाला, ऐसा गुरु-भक्त आज्ञाधीन शिष्य; इस प्रकार के संसार में बहुत थोड़े लोग हैं समझे भाई साहब! घुटा-सर, बंधी-चोटी, नंगे-पैर धोती पहने, मद्रासी फर्स्ट क्लास में चढ़ा; घूमता-टहलता, भूख लगने पर लाई-मटर चबाता। नौकर लोग मद्रासी-मात्र को समझते हैं "चट्टी" और "इनके बहुत सा रुपया है, लेकिन न कपड़े ही

पहनेंगे, न खायेंगे ही।" परन्तु हमारे साथ पड़कर उसकी जाति की मिट्टी पलीद हो रही है—नौकर लोग कह रहे हैं। असल बात है—तुम लोगों के पल्ले पड़कर मद्रासियों की जाति का हाल बहुत कुछ बदला हुआ क्यों, बिल्कुल बेहाल हो गया है।

आलासिंगा को "सी-सिकनेस" नहीं हुई। 'तु'—भाई साहब पहले कुछ घबराये थे, अब संभल कर बैठे हैं। अतएव चार रोज अनेक प्रकार के वार्तालाप से इष्टगोष्ठी में कटे। सामने कोलम्बो है। यही सिंहल, लङ्का है।

सीलोनी ढंग

श्रीरामचन्द्रजी ने सेतु बांधकर पार हो लङ्का के राजा रावण पर विजय प्राप्त की थी। सेतु तो देख रहा हूँ; सेतुपति महाराजा के मकान में जिस पत्थर के टुकड़े पर भगवान् रामचन्द्र ने अपने पूर्वपुरुष को प्रथम सेतुपति राजा बनाया था वह भी देख रहा हूँ। लेकिन यह पाप बौद्ध सीलोनी लोग जो नहीं मानना चाहते, कहते हैं—हमारे देश में तो ऐसी किंवदन्ती भी नहीं है। अरे! नहीं है कहने से क्या होगा!—"गोसाईं" जी ने पोथी में लिखा जो है। इसके बाद वे लोग अपने देश को कहते हैं सिंहल, लङ्का नहीं कहेंगे; कहेंगे कहाँ से! उनकी न बात में कड़ुआपन, न काम में कड़ुआपन, न प्रकृति में कड़ुआपन। राम कहो! घांघरा पहने, चोटी बांधे, इधर जूड़े में बड़ी सी एक कंघी खोंसे, जनानी सूरत के! फिर दुबले-पतले नाटे से मुलायम शरीर वाले! ये हैं रावण-कुम्भकर्ण के बच्चे! ले हो चुका! कहते हैं—बंगाल से आया था, अच्छा ही किया था। यह जो एक दल देश में उमड़ रहा है, औरतों की तरह पहनाव-उढ़ाव, नजाकत-भरी बोली,

तिरछी-तिरछी चाल, किसी की आँख पर आँख रख कर बात नहीं कर सकते, और पैदा होने के दिन से ही प्रेम की कविताएँ लिखते हैं और जुदाई की आग से "हाय हुसेन हाय हसन" किया करते हैं—ये लोग क्यों नहीं जाते जनाब सीलोन ! बम्बई गवर्नमेण्ट सोती है क्या ! उस दिन पुरी में न जाने किनके घर पकड़ में तमाम होहल्ला मचाया, अजी राजधानी में पकड़ कर कैद किये जाने वाले भी तो बहुत से हैं।

सिंहल का इतिहास

एक था महादुष्ट बंगाली राजा का लड़का—नाम विजयसिंह, उसने बाप के साथ तकरार कर अपनी तरह के कुछ और साथी इकट्ठे किये; फिर बहते बहते लङ्का के टापू में हाजिर। उस समय उस देश में जंगली जातियों का वास था जिसके वंशधर इस समय वेदा के नाम से प्रसिद्ध हैं। जंगली राजा ने बड़ी खातिर से रखा। अपनी लड़की को ब्याह दिया। कुछ दिन तो वह भले आदमी की तरह रहा, इसके बाद एक दिन बीबी के साथ सलाह करके एकाएक रात को दलबल सहित उठकर सरदारों के साथ जंगली राजा को क़त्ल कर डाला। इसके बाद जनाब विजयसिंह हुए राजा। बदमाशी का यहीं पर विशेष अन्त नहीं हुआ। इसके बाद आपको इस जंगली की लड़की रानी पसन्द नहीं आई। तब भारतवर्ष से और भी आदमी, और भी बहुतसी लड़कियों को मँगवाया। अनुराधा नाम की एक लड़की से तो स्वयं विवाह किया, और उस जंगली लड़की को हमेशा के लिए बिदा कर दिया; उस तमाम जाति का निधन करने लगे। बिचारे करीब करीब सब मारे गये।

कुछ अंश झाड़ियों-जंगलों में आज भी बस रहा है। इस तरह लङ्का का नाम हुआ सिंहल और यह बना बंगाली बदमाशों का उपनिवेश। क्रमशः अशोक महाराज के समय, उनका लड़का माहिन्दो और लड़की संघमित्ता संन्यास लेकर धर्मप्रचार करने के लिए सिंहल टापू में हाजिर हुए। इन लोगों ने जाकर देखा कि लोग सब बड़े ही अनाड़ी हो गये हैं। तमाम जिन्दगी मेहनत करके उन लोगों को भरसक सभ्य बनाया; अच्छे अच्छे नियम बनाए और उन लोगों को शाक्य-मुनि के सम्प्रदाय में लाये। देखते देखते सीलोनी लोग निहायत कट्टर बौद्ध हो गए। लङ्काद्वीप के बीचो-बीच एक विशाल शहर बनाया। नाम रखा अनुराधापुर। अब भी उस शहर का भग्नावशेष देखने से अक्ल हैरान हो जाती है। बड़े बड़े स्तूप, कोसों तक पत्थरों की टूटी इमारतें खड़ी हैं। और भी कितना ही जंगल है जो अब भी साफ़ नहीं किया गया। सीलोन भर में घुटे सिर, करुवाधारी, पीली चादर से ढकी, भिक्षु-भिक्षुणियाँ फैल गईं। जगह-जगह बड़े-बड़े मन्दिर बन गये—बड़ी बड़ी ध्यानमूर्तियाँ, ज्ञानमुद्रा लिए हुए प्रचार-मूर्तियाँ, बगल पर सोई हुई महानिर्वाण-मूर्तियाँ—उनके भीतर और दीवार की बगल में सीलोनी लोगों ने बदमाशी की—नरक में उनका क्या हाल होता है, वही खींचा हुआ है; किसी को भूत पीट रहे हैं, किसी को आरे से चीर रहे हैं, किसी को जला रहे हैं, किसी को गर्म तेल से कल्हार रहे हैं, किसी की खाल निकाल रहे हैं—वह महा

सिंहल में बौद्ध धर्म प्रचार

बौद्ध धर्म की अवनति

वीभत्स कारखाना है ! इस " अहिंसा परमो धर्मः " के भीतर ऐसी कारगुजारी छिपी है, कौन जानता है। चीन में भी यही हाल; जापान में भी यही। इधर तो अहिंसा, और सजा के प्रकार-भेद देखिये तो जान सूख जाती है। एक 'अहिंसा परमो धर्मः' के मकान में घुसा चोर। मालिक के लड़के उसे पकड़कर लगे बेदम पीटने। तब मालिक दुमंजले के बरामदे में आकर गोलमाल देख, खबर लेकर चिल्लाने लगा—"अरे मार मत, मार मत; अहिंसा परमो धर्मः।" सब लड़के मारना रोककर पूछने लगे, " तो फिर चोर का क्या किया जाय !" मालिक ने आज्ञा दी, इसे थैले में भरकर, पानी में डाल दो। " चोर ने हाथ जोड़कर कहा, " अहा मालिक बड़े ही कृपालु हैं ! " बौद्ध लोग बड़े शान्त हैं, सब धर्मों पर बराबर दृष्टि है, यही सुना था। बौद्ध प्रचारक लोग हमारे कलकत्ते में आकर, तरह तरह की गालियाँ झाड़ते हैं, लेकिन हम लोग फिर भी उनकी यथेष्ट पूजा किया करते हैं। एक बार मैं अनुराधापुर में व्याख्यान दे रहा था, हिन्दुओं के बीच में, बौद्धों में नहीं, वह भी खुले मैदान में, किसी की जमीन पर नहीं। इतने में ही दुनिया के बौद्ध " भिक्षु ", गृहस्थ, स्त्री-पुरुष, ढोल-झाँझें आदि लेकर ऐसी विकट आवाज करने लगे कि फिर क्या कहूँ ! लेक्चर तो समाप्त ही हो गया; नौबत खून-खराबी की आ पहुँची। तब बहुत तरह से हिन्दुओं को समझा दिया कि उन लोगों से न हो, तो आओ हमीं लोग जरा अहिंसा करें, तब शान्ति हुई।

क्रमशः उत्तर तरफ से हिन्दू तामिल कुल ने धीरे धीरे लङ्का में प्रवेश किया। बौद्ध लोगों ने रंग जरा बुरा देख कर

राजधानी छोड़कर कान्दी नामक पार्वत्य शहर की स्थापना की। तामिलों ने कुछ दिनों में वह भी छीन लिया और हिन्दू राज्य खड़ा किया। इसके बाद आया फिरंगियों का दल, स्पेनियार्ड, पोर्तगीज, डच। अन्त में अंग्रेज राजा हुए हैं, कान्दी का राजवंश तंजोर भेजा गया है, पेनशन पाकर आम, मुड़गतन्नी भात खा रहे हैं।

उत्तर सीलोन में हिन्दुओं का भाग बहुत ज्यादा है; दक्षिण तरफ़ बौद्ध और रंग-बिरंगे दोगले फिरंगी। बौद्धों का प्रधान स्थान वर्तमान राजधानी कोलम्बो है और हिन्दुओं का जाफना। जातिवाला गुलगपाड़ा भारतवर्ष से यहाँ बहुत कम है। बौद्धों में कुछ है, शादी-ब्याह के वक्त। खान-पान का विचार-विवेचन बौद्धों में बिलकुल नहीं। हिन्दुओं में कुछ कुछ है। जितने ईसाई हैं वे पहले सब बौद्ध थे। आजकल घट रहे हैं; धर्मप्रचार हो रहा है, बौद्धों के अधिकांश यूरोपीय नाम इन्डुम पिन्डुम अब बदल दिये जा रहे हैं; हिन्दुओं की सब तरह की जातियाँ मिलकर एक हिन्दू जाति हुई है। इसमें बहुत कुछ पञ्जाबी जाटों की तरह सब जाति की लड़कियाँ और बिबियाँ तक ब्याही जा सकती हैं। लड़का मन्दिर में जाकर त्रिपुण्ड खींचकर, 'शिव शिव' कह कर हिन्दू बनता है; स्वामी हिन्दू, स्त्री क्रिश्चियन है। ललाट पर विभूति लगाकर "नमः पार्वती पतये" कहने से ही क्रिश्चियन तत्काल हिन्दू बन जाता है, इसीलिए तुम्हारे ऊपर यहाँ के पादरी इतना बमके रहते हैं। तुम लोगों का जब से आना जाना हुआ,

वर्तमान आचार-विचार

बहुत से क्रिश्चियन विभूति लगाकर “नमः पार्वती पतये” कहकर हिन्दू बन, जात में लौटे हैं। अद्वैतवाद और वीर-शैववाद यहाँ का धर्म है। हिन्दू शब्द की जगह शैव कहना पड़ता है। चैतन्यदेव ने जिस नृत्य-कीर्तन का बंगदेश में प्रचार किया है, उसकी जन्म-भूमि दाक्षिणात्य है, इसी तामिल जाति के भीतर। सीलोन की तामिल भाषा शुद्ध तामिल है, सीलोन का धर्म शुद्ध तामिल धर्म है—वह लाखों आदमियों का उन्माद-कीर्तन, शिव-स्तवगान, वह हजारों मृदंग की ध्वनि, वह बड़ी बड़ी करतालों की झांझें और यह विभूति-भूषित, मोटे मोटे रुद्राक्ष की मालाएँ गले में, पहलवानी चेहरा, लाल आँखें, महावीर की तरह, तामिलों का मतवाला नाच बिना देखे समझ न सकोगे।

कपड़ा, बंगाल की साड़ी के तरीके से पहनती हैं। सीलोन के बौद्धों में यह ढंग खूब पसन्द आ गया है देखा! गाड़ियों में भी स्त्रियाँ देखीं—सब बंगाली साड़ियाँ पहने हुए।

बौद्धों के प्रधान तीर्थ कान्दी में दन्त-मन्दिर है। उस मन्दिर में बुद्ध भगवान् का एक दाँत है। सीलोनी लोग कहते हैं, वह दाँत पहले पुरी में जगदम्बा के मन्दिर में था, बाद को अनेक तरह के हंगामे होने पर सीलोन लाया गया। वहाँ भी हंगामा कम नहीं हुआ। अब निरापद अवस्थान कर रहे हैं। सीलोनी लोगों ने अपना इतिहास अच्छी तरह लिख रखा है। हमारी तरह नहीं कि सिर्फ आषाढ़ी कहानियाँ! और सुना है कि बौद्धों का शास्त्र भी प्राचीन मागधी भाषा में इसी देश में सुरक्षित है। इस स्थान से ही ब्रह्मदेश, स्याम आदि मुल्कों को धर्म गया है। सीलोनी लोग अपने शास्त्रोक्त एक शाक्यमुनि को ही मानते हैं, और उन्हीं के उपदेश मानकर चलने की चेष्टा करते हैं। नेपाली, सिकिमी, भूटानी, लादाकी, चीनी और जापानियों की तरह शिव की पूजा नहीं करते, और न "ह्रीं तारा" यह सब जानते हैं। परन्तु भूत आदि का उतारना—इन बातों में उनका विश्वास है। बौद्ध लोग इस समय उत्तर और दक्षिण दो विभागों में बँट गये हैं। उत्तर विभाग वाले अपने को कहते हैं महायान; और दक्षिणी अर्थात् सिंहली, ब्रह्मी, स्यामी आदि अपने को कहते हैं हीनयान। महायान वाले बुद्ध की पूजा नाममात्र को करते हैं; असल पूजा तारादेवी और अवलोकितेश्वर की करते हैं (जापानी, चीनी और कोरियन लोग अवलोकितेश्वर को कहते हैं क्वानयन) और 'ह्रीं क्लीं' तन्त्र-मन्त्रों की

बुद्धदन्तेतिहास तथा वर्तमान बौद्ध धर्म

बड़ी धूम है। तिब्बतवाले असल शिवभूत हैं, वे सब हिन्दू के देवताओं को मानते हैं, डमरू बजाते हैं, मुर्दे की खोपड़ी रखते हैं, साधु के हाड़ों का भोंपू बजाते हैं, मद्य और मांस के यार हैं। और हमेशा मंत्र पढ़ पढ़ कर रोग, भूत, प्रेत भगा रहे हैं। चीन और जापान के सब मन्दिरों की दीवार पर 'ओं ह्रीं क्लीं' सब बड़े-बड़े सुनहले हरफों में लिखा है। वे अक्षर बंगला के इतने नजदीक हैं कि साफ समझ में आ जाते हैं।

आल्ासिंगा कोलम्बो से मद्रास लौट गया। हम लोग भी कुमार स्वामी के (कार्तिक के नाम सुब्रमण्य, कुमार स्वामी आदि आदि हैं; दक्षिण देश में कार्तिक की बड़ी पूजा होती है, बड़ा मान है; कार्तिक को ओंकार का अवतार कहते हैं) बगीचे की नारंगियाँ, कुछ नारियलों के राज (King Cocoanut), दो बोतल शरबत आदि उपहार सहित फिर जहाज पर चढ़े।

हैं; खुशमिजाज आदमी हैं; आयाढ़ी कहानियाँ कहने में बड़े मजबूत हैं। तरह तरह की डाकुओं की कहानियाँ;—चीनी कुली किस तरह जहाज के आफिसरों को मारकर कुल जहाज लूटकर भाग जाते थे—इस तरह के बहुत से किस्से सुनाया करते हैं। और किया ही क्या जाय!—लिखना पढ़ना इस हाल-डोल के मारे बिल्कुल मुश्किल हो रहा है। कैबिन के भीतर बैठना टेढ़ी खीर है। तरंगों के भय से झरोखे कस दिये गये हैं। एक दिन 'तू—' भाई साहब ने जरा खोल दिया था, एक तरंग का जरा सा टुकड़ा जल-प्लावन कर गया। ऊपर वह कैसी उथल पुथल, कैसी आफ़त हो गई! इसी के भीतर तुम्हारे उद्बोधन का काम थोड़ा बहुत चल रहा है, याद रखना।

जहाज पर दो पादरी चढ़े हैं। एक अमेरीकन—सपत्नीक बड़े अच्छे आदमी हैं, नाम है बोगेश। बोगेश का विवाह हुए सात वर्ष हो चुके हैं; लड़के-लड़कियाँ छः हैं; नौकर लोग कहते हैं, ख़ुदा की बड़ी मेहरबानी है! लड़कों को यह अनुभव नहीं हुआ शायद! एक कंथा बिछाकर बोगेश की स्त्री लड़के-लड़कियों को उसी डेक पर सुलाकर चली जाती है। वे सब वहीं लथपथ होकर रोते हुए लोटते-पोटते हैं। यात्री सदा ही सशंक रहते हैं। डेक पर टहलने की गुञ्जाइश नहीं। डर है कि कहीं बोगेश के लड़कों को कुचल न डालें। सब से छोटे बच्चे को—चौकोर टोकरी में सुलाकर बोगेश और बोगेश की पादरिन सट-लिपट कर कोने में चार घण्टे बैठे रहते हैं। तुम्हारी यूरोपीय सभ्यता समझना कठिन है। हमलोग अगर बाहर कुल्ला करें या दांत माँजें तो कहोगे कैसा असभ्य है—ये सब काम एकान्त में करना उचित है

क्या एकान्त में करना अच्छा नहीं ! तुम लोग फिर इस सभ्यता की नकल करने जाते हो ! खैर प्रोटेस्टन्ट धर्म ने उत्तर योरप का क्या उपकार किया है, इस पादरी-पुरुष को बिना देखे हुए तुम लोग समझ नहीं सकोगे। यदि ये दस करोड़ अंग्रेज सब मर जायँ, सिर्फ पुरोहित कुल बचा रहे तो, बीस वर्ष के बाद फिर दस करोड़ की उपज !

जहाज के हालडोल से बहुतों का सर दर्द होने लगा है। टूटल नाम की छोटी सी लड़की अपने बाप के साथ जा रही है, उसकी माँ नहीं है। हमलोगों की निवेदिता टूटल और बोगेश के लड़कों की माँ बन बैठी है। टूटल बाप के पास मैसूर में पली है; बाप प्लान्टर है। टूटल से मैंने पूछा, "टूटल, तुम कैसी हो ?" टूटल ने कहा, "यह बंगला अच्छा नहीं, बहुत झूमता है, और मेरी तबियत नाराज होती है।" टूटल के पास सभी घर मानो बंगले हैं। बोगेश के एक छोटे बच्चे की देखभाल करनेवाला कोई भी नहीं है। बेचारा दिन भर डेक के काठ पर टनकता फिरता है। वृद्ध कप्तान रह रह कर कमरे से निकलकर उसे चम्मच से शोरबा पिला जाता है और उसका पैर दिखाकर कहता है, कितना दुबला लड़का है, कितना बेबरदास्त !

बहुत से लोग अनन्त सुख चाहते हैं। सुख अनन्त होने से दुःख भी अनन्त होता है—फिर ! क्या हमलोग एडेन पहुँच भी सकते ! किस्मत का सुख-दुःख कुछ भी अनन्त नहीं, इसलिए तो छः दिन का रास्ता चौदह दिन में, दिन-रात तूफ़ान और बादलों के भीतर से गुजर कर भी अन्त में हमलोग एडेन पहुँच ही गये।

मानसून का केन्द्र

कोलम्बो से जितना आगे बढ़ा जाता है, उतनी ही हवा भी बढ़ती है, उतना ही आसमान—बादल-घटायें, उतनी ही वृष्टि, उतना ही हवा का जोर, उतनी ही तरंगें—उस हवा, उन तरंगों की ठेल पर कभी जहाज चल सकता है? जहाज की गति आधी हो गई—साकोत्रा द्वीप के आस पास पहुँच कर हवा निहायत बढ़ गई। कप्तान ने कहा, इस जगह मानसून का केन्द्र है। इसे पार कर सकने पर ही क्रमशः शान्त सागर मिलेगा और ऐसा ही हुआ। यह दास्तान भी कहा।

से सिन्धी व्यापारी हैं। यह एडेन बहुत प्राचीन स्थान है—रोमन बादशाह कानस्टान्सिउस ने एक दल पादरी भेज कर यहाँ क्रिस्तान धर्म का प्रचार कराया था। बाद को अरब लोगों ने उन क्रिस्तानों को मार डाला। इससे रोम के सुलतान ने प्राचीन क्रिस्तान हबशी देश के बादशाह से उन्हें सज़ा देना का अनुरोध किया। हबशी राजा ने फौज भेजकर एडेन के अरबों को सख्त सज़ा दी। बाद को एडेन ईरान के 'सामा-निडी' बादशाहों के हाथ में गया। उन्हीं लोगों ने, सुना जाता है, पानी के लिए सब गढ़े खुदवाये थे। इसके बाद, मुसलमान धर्म के अभ्युदय के पश्चात् एडेन अरबों के हाथ में गया। कुछ काल बाद पोर्तगीज़ सेनापति ने उस स्थान पर कब्ज़ा करने के लिए व्यर्थ प्रयत्न किया था। बाद में तुर्की सुलतान ने उस जगह को पोर्तगीज़ों को भारत महासागर से भगाने के लिए दरियाई जंगी जहाज़ों का बन्दर बनाया।

एडेन का इतिहास

फिर वह नज़दीक के अरब मालिकों के अधिकार में गया। फिर अंग्रेजों ने खरीद कर वर्तमान एडेन तैयार किया है। अब हर एक शक्तिशाली जाति के जंगी जहाज दुनिया भर में घूमते-फिरते हैं। कहाँ कौन सा बखेड़ा हो रहा है, उसमें सभी लोग दो बातें कहना चाहते हैं। अपनी बड़ाई, स्वार्थ और वाणिज्य की रक्षा करना चाहते हैं। अतएव कभी कभी कोयले की ज़रूरत पड़ जाती है। शत्रुओं की जगह से कोयला लेना लड़ाई के वक्त चल नहीं सकता, इसलिए प्रत्येक राष्ट्र अपने अपने कोयला लेने के स्थान करना चाहते हैं। अच्छी अच्छी जगहें तो अंग्रेजों ने ले ली हैं,

इसके बाद फ्रान्स ने; फिर जिसको जहाँ जगह मिली—छीनकर, खरीद कर, खुशामद करके,—एक एक जगह अपनाई है और, अपना रहे हैं। स्वेज कैनाल अब योरप और एशिया का संयोग-स्थान है। वह फ्रांसीसियों के हाथ मे है। इसीलिए अंग्रेजों ने एडेन में खूब गड़ कर अड्डा जमाया है और दूसरी दूसरी जातियों ने भी लाल सागर के किनारे किनारे एक एक जगह अपना ली है। कभी कभी जगह लेकर ही उल्टी तकरार छिड़ जाती है। सात सौ साल के बाद पद-दलित इटैली कितनी तकलीफ से अपने पैरों खड़ी हो सकी। खड़े होते ही सोचा, अरे, हम हो क्या गये? अब दिग्विजय करना होगा। योरप का एक टुकड़ा भी लेने का किसीको अख्तियार नहीं; सब मिलकर उसे मारेंगे। एशिया का—बड़े बड़े बाघ भालुओं ने—अंग्रेज, रूस, फ्रेंच, डचों ने—कुछ रक्खा थोड़े ही है? अब बाकी हैं दो चार टुकड़े अफ्रिका के। इटैली उसी तरफ चल पड़ी। पहले उत्तर-अफ्रिका में चेष्टा की। वहाँ फ्रांस द्वारा खदेड़ी गई और भाग आई। इसके बाद अंग्रेजों ने रेड सी के किनारे पर एक जमीन का टुकड़ा उसे दान किया। अर्थात्, इस उद्देश से कि उसी केन्द्र से, इटैली हबशी राज्य उदरसात् करे। इटैली भी फौजफाटा लेकर बढ़ी। लेकिन हबशी बादशाह मेनेलिक् ने ऐसे जोर से मार भगाया कि अब इटैली के लिए अफ्रिका छोड़कर जान बचाना आफत हो रहा है। फिर सुना है

तथा हबशियों की क्रिस्तानगी एक ही प्रकार की है, इसलिए बादशाह भीतर भीतर हबशियों के मददगार हैं।

जहाज रेड सी के भीतर से जा रहा है। पादरी ने कहा, "यही—रेड सी है,—यहूदी नेता मूसा ने अपने दल के साथ इसे पैदल पार किया था। और उन्हें पकड़ ले आने के लिए मिश्री बादशाह फेरो ने जो फौज भेजी थी, वह फौज की फौज रथ के पहिये गड़ जाने से—कर्ण की तरह अटक कर—पानी में डूब कर मर गई।" पादरी ने और भी कहा, कि यह बात आजकल की विज्ञान युक्ति से प्रमाणित की जा सकती है। अब सब धर्मों की अजब अजब कथाएँ विज्ञान की युक्ति द्वारा प्रमाणित करने की एक लहर उठ पड़ी है। मिया! अगर प्राकृतिक नियम से यह सब हो सकता है तो फिर तुम्हारे 'याभे' देवता बीच में क्यों टपक पड़ते हैं! बड़ी मुश्किल है!—यदि विज्ञान विरुद्ध हो, तो वे करामातें—और तुम्हारा धर्म मिथ्या है। यदि विज्ञान-सम्मत हो तो भी तुम्हारे देवता की महिमा बढ़ाया हुआ हिस्सा है और बाकी सब प्राकृतिक घटना की तरह आप ही आप हुआ है! पादरी बोगेश ने कहा, "मैं इतना यह कुछ नहीं जानता, मैं विश्वास करता हूँ।" यह बात बुरी नहीं, यह सह्य होती है। परन्तु वह जो एक दल है,—दूसरों के दोष दिखाने में, युक्ति लाने में कैसे तैयार हैं, पर स्वयं के सम्बन्ध में कहते हैं, "मैं विश्वास करता हूँ, मेरा मन गवाही दे रहा है"—उनकी बातें बिलकुल असह्य हैं, बलिहारी है!—उनकी बुद्धि का मूल्य ही क्या है! कुछ नहीं! दूसरों के सब कुसंस्कार हैं, खास तौर से जिन्हें साहबों ने कहा है, और आप स्वयं ईश्वर के सम्बन्ध में अजीब कल्पना करके रोते हैं तो रोते ही हैं!!

पादरी बोगेश तथा रेड सी के सम्बन्ध में पौराणिक कथा

जहाज क्रमशः उत्तर की तरफ चल रहा है। यह लाल समुद्र का किनारा प्राचीन सभ्यता का एक महाकेन्द्र है। वह उस पार अरब की मरुभूमि है; इस पार मिश्र। यह वही प्राचीन मिश्र है; यही मिश्री पुन्ट देश से (सम्भवतः मालाबार से), रेड सी पार होकर, कितने हजार वर्ष पहले धीरे धीरे विस्तार कर उत्तर पहुँचे थे। इनकी शक्ति का, राज्य का और सभ्यता का विस्तार एक आश्चर्य की बात हुई। यवन लोग इनके शिष्य हैं।

मिश्री सभ्यता की उत्पत्ति तथा उसका (सम्भवतः भारतवर्ष से) विस्तार

इनके बादशाहों के पिरामिड नाम के समाधि-मन्दिर आश्चर्यजनक हैं और नारियों की सिंही मूर्तियाँ (Sphinx) भी। इनकी लाशें भी आज तक विद्यमान हैं। बावरी बाल, बिना कांछा के सफेद धोती पहने हुए, कानों में कुण्डल, मिश्री लोग सब इसी देश में वास करते थे। इस हिक्स वंश, फेरो वंश, ईरानी बादशाही, सिकन्दर टालेमी वंश और रोमन व अरबी वीरों की रंगभूमि यही मिश्र है। उतने युग पहले ये लोग अपना वृत्तान्त पापिरस पत्रों में, पत्थरों पर, मिट्टी के बर्तनों पर, चित्राक्षरों से खूब सावधानी से लिख गये हैं।

इस भूमि में आइसिस की पूजा हुई और होरस का प्रादुर्भाव हुआ। इन प्राचीन मिश्रियों के मत से, आदमी के मर जाने पर उसका सूक्ष्म शरीर टहलता फिरता है, लेकिन मृत देह को कोई नुकसान पहुँचने पर ही सूक्ष्म शरीर को यह चोट लगती है, और मृत शरीर का ध्वंस होने पर सूक्ष्म शरीर का सम्पूर्ण नाश हो जाता है। इसीलिए शरीर-रक्षा की इतनी तरद्दुद,

मिश्रियों का आध्यात्मिक मत 'ममी' अथवा मिश्री राजाओं की मृत देह

की जाती है। इसीलिए राजाओं-बादशाहों के पिरामिड उठे हैं। कितना कौशल! कितना परिश्रम! अहा सभी विफल! उन्हीं पिरामिडों को खोद कर, अनेक कौशल के रास्तों का रहस्य भेद कर रत्नों के लोभ से दस्युओं ने उस राजशरीर की चोरी की है। आज की बात नहीं, प्राचीन मिश्रियों ने स्वयं ही किया है। पाँच सात सौ वर्ष पहले यह सब सूखे हुए मुर्दे, यहूदी और अरब डाक्टर महौषधि समझ कर योरप भर के रोगियों को खिलाते थे। अब भी शायद वही युनानी हकीमी की असल "मूमिया" हैं!!

इसी मिश्र में टलेमी बादशाह के वक्त सम्राट धर्म अशोक ने धर्मप्रचारक भेजे थे। वे लोग धर्म-प्रचार करते थे, रोग अच्छा करते थे, निरामिष होते थे, विवाह नहीं करते थे, संन्यासी शिष्य करते थे। उन लोगों ने अनेक सम्प्रदायों की सृष्टि की—थेरापिउट, असुसिनी, मानिकी आदि आदि—जिनसे वर्तमान ईसाई धर्म का उद्भव हुआ। यही मिश्र, टलेमियों के राज्यकाल में, सर्व विद्याओं का केन्द्र हो गया था। इसी मिश्र में वह आलेकजेन्ड्रिया नगर है, जहाँ का विद्यालय, पुस्तकालय तथा जहाँ के विद्वान् सारे संसार में प्रसिद्ध हुए थे, जो आलेकजेन्ड्रिया मूर्ख कट्टर, इतर क्रिस्तानों के हाथ पड़ कर ध्वंस हो गया,—पुस्तकालय भस्म-राशि हो गया—विद्या का सर्वनाश हो गया! अन्त में उस विदुषी नारी को* क्रिस्तानों ने मार डाला

सम्राट अशोक तथा मिश्र देश में बौद्ध धर्म का प्रचार

क्रिस्तानों का अत्याचार

* हाइपेशिया (Hypatia).

था, उसकी नग्न देह को रास्ते-रास्ते सब प्रकार से बीभत्स रूप से अपमानित कर खींचते फिरे थे, आस्थि से एक-एक टुकड़ा मांस अलग कर डाला था।

अरबों का अत्याचार

और दक्षिण में वीर-प्रसू अरब की मरुभूमि है। कभी अल-खल्ला झुलाये, पश्मीने लच्छों का एक बड़ा सा मोटा रुमाल सर से कसे हुए 'बेडाईन' अरबों को देखा है!—वह चलन, वह खड़े होने का कायदा, वह चितवन और किसी देश में नहीं है। आपादमस्तक मरुभूमि की अनवरुद्ध हवा की स्वाधीनता फूट कर निकल रही है—यही अरब। जब क्रिश्चियनों की कट्टरता और जाटों की बर्बरता ने प्राचीन यूनान और रोमन सभ्यतालोक को निर्वाण कर दिया, जब ईरान अपने अन्तर की घोर दुर्गन्ध को सोने के पत्र से मोड़ने की लगातार चेष्टा कर रहा था, जब भारत में पाटलीपुत्र और उज्जयिनी के गौरवसूर्य अस्ताचल को ढल गये, तथा जब मूर्ख क्रूर राजन्यवर्ग में आन्तरिक भयानक अश्लीलता और कामपूजा की गन्दगी फैली हुई थी, उसी समय यह नगण्य पशुवत् अरब जाति बिजली की तरह संसार भर में फैल गई।

वर्तमान अरब

यह जहाज मक्का से आ रहा है—यात्रियों से भरा हुआ, यह देखो,—यूरोपी पोशाक पहने हुए तुर्क, आधे यूरोपीय वेश में मिश्री, यह सुरियावासी मुसलमान ईरानी पोशाक में, और यह असल अरब धोती पहने हुए बिना दाढ़ी के। मुहम्मद के पहले काबा के मन्दिर में [illegible]

प्रदक्षिणा करनी पड़ती थी। उनके समय से एक धोती छोड़नी पड़ती है। इसीलिए हमारे मुसलमान लोग नमाज़ के समय इज़ारबन्द तथा धोती की कांछ खोल देते हैं। अब अरबों के वे दिन चले गए हैं। लगातार काफ़री, सीदी, हबशी खून पैवस्त हो रहा है; चेहरा, उद्यम, सब बदल दिया है—रेगिस्तान के अरब 'पुनर्मूषिक' हो गये हैं। जो लोग उत्तर में हैं, वे तुर्किस्तान में बसते हैं—चुपचाप। लेकिन सुल्तान की क्रिश्चियन रियाया तुर्कों से घृणा करती है और अरबों को प्यार; वे लोग कहते हैं, "अरब लोग पढ़ लिख कर भले आदमी होते हैं, उतने शरारती नहीं" और असली तुर्क क्रिश्चियनों पर बड़ा ही अत्याचार करते हैं।

रेगिस्तान की गर्मी

रेगिस्तान बहुत गर्म होने पर भी, वह गर्मी हानिकारक नहीं होती। उसमें कपड़े से देह और सर को ढके रखने से फिर कोई शंका नहीं। शुष्क गर्मी कमज़ोर तो करती ही नहीं, वरन् विशेष बलकारक है। राजपूताना, अरब, अफ़्रिका के आदमी इसके निदर्शक हैं। मारवाड़ के किसी किसी ज़िले में आदमी, बैल, घोड़े आदि सब सबल और बड़े आकार के होते हैं। अरबी आदमियों और सिदियों को देखने से आनन्द होता है। जहाँ नम गर्मी होती है जैसे बंगाल देश की, वहाँ शरीर बहुत ही शिथिल पड़ जाता है और सब लोग कमज़ोर होते हैं।

लाल सागर के नाम से यात्रियों का कलेजा काँप उठता है—बड़ी गर्मी होती है फिर पर यह गर्मी का मौसम। डेक पर बैठ

रेड सी की गर्मी

हुआ जो जिस तरह बेड़ा गर्क, किसी भयानक दुर्घटना की कहानी सुना रहा है। कप्तान सब से ऊँचे गले से हाँक रहे हैं। उन्होंने कहा, कुछ दिन पहले एक चीनी जंगी जहाज इसी रेड सी से जा रहा था, उसका कप्तान और आठ आदमी कोयला वाले खलासी गर्मी से मर गये।

वास्तव में कोयला वाला तो आग के कुंड में खड़ा रहता है, उस पर रेड सी की भयानक गर्मी। कभी-कभी पागल की तरह ऊपर दौड़ता हुआ आकर पानी में कूद पड़ता है और डूब कर मर जाता है, कभी तो गर्मी से नीचे ही मर जाता है।

ये सब कहानियाँ सुनकर हृत्कम्प होने ही को था। पर भाग्य अच्छे थे कि हम लोगों को कुछ विशेष गर्मी नहीं मालूम हुई, हवा दक्षिणी न होकर उत्तर की तरफ से आने लगी—वह भूमध्यसागर की ठंडी हवा थी।

स्वेज बंदर तथा प्लेग का 'कारांटीन'

१४ जुलाई को रेड सी पार होकर जहाज स्वेज पहुचा। सामने स्वेज कैनाल है। जहाज पर स्वेज में उतारने के लिए माल है। इस पर आये हैं मिश्र में प्लेग, और हम लोग ला रहे हैं प्लेग, सम्भवतः इसलिए दूतरफा छुआछूत का डर है। इस छुआछूत की बला के पास हमारी देशी छुआछूत की बला कहाँ लगती है! माल उतरेगा, लेकिन देशी स्वेज के कुली जहाज न छू सकेंगे। जहाज के खलासी बेचारों के लिए आफत है और क्या! वे ही कुली बनकर क्रेन से माल उठाकर नीचे स्वेज के नाव पर डाल रहे हैं—वे लोग माल लेक[illegible] रे जा रहे

है। कम्पनी के एजेन्ट छोटी सी लांच पर चढ़कर जहाज के पास आये हुए हैं, चढ़ने का हुक्म नहीं है। कप्तान के साथ जहाज की नाव पर बातचीत हो रही है। यह भारतवर्ष तो है नहीं कि गोरा आदमी प्लेग-कानून-सानून सब के पार है—यहीं से यूरोप का आरम्भ है। स्वर्ग पर कहीं मूषिकवाहन प्लेग न चढ़ जाय इसलिए इतना सब इन्तज़ाम है। प्लेग-विष, प्रवेश से दस दिन के अन्दर फूट निकलता है, इसलिए दस दिन तक अटकाव रहता है! हम लोगों के लिए दस दिन हो गये हैं, चलो बला टल गई है। लेकिन किसी मिश्री आदमी को छूने पर ही फिर दस दिन का अटकाव हो तो फिर नेपल्स में भी आदमी न उतारे जाएँगे, मार्सेइ में भी नहीं—इसलिए जो कुछ काम हो रहा है, सब मनमौजी; इसीलिए धीरे-धीरे माल उतारते हुए सारा दिन लग जायगा। रात को जहाज अनायास ही कैनाल पार कर सकता है, यदि सामने बिजली का प्रकाश पा जाय। लेकिन वह सर्चलाइट पहनाने पर स्वेज के आदमी को जहाज छूना होगा, बस–दस दिन " कारांटीन "। इसलिए रात को भी जाना न होगा, चौबीसो घण्टे यहीं पड़े रहो, स्वेज बन्दर में। यह बड़ा सुन्दर प्राकृतिक बन्दर है, प्रायः तीन तरफ से बालू के टीले और पहाड़ हैं—जल भी खूब गहरा है। पानी में असंख्य मछलियाँ और मगर तैरते फिरते हैं। इस बन्दर में, और आस्ट्रिया के सिडनी बन्दर में जितने मगर हैं, इतने और दुनिया में कहीं नहीं—घात में पाया कि आदमी को चट कर गये। पानी में उतरता कौन है ? सांप और मगर के साथ आदमी की भी जानी दुश्मनी है। आदमी भी घात में

पाकर इन्हें छोड़ता नहीं।

सुबह को खाने पीने के पहले ही सुना गया कि जहाज के पीछे बड़े-बड़े मगर तैर रहे हैं। पानी के भीतर जीवित मगर पहले और कभी नहीं देखे थे। उस बार आने के समय स्वेज में जहाज थोड़ी देर के लिए ही ठहरा था, वह भी शहर के किनारे। मगर की खबर सुनकर ही हमलोग झट हाजिर हुए। सेकेण्ड क्लास जहाज के पिछले हिस्से के ऊपर है—उसी छत से रेलिंग पकड़कर कतार की कतार स्त्री-पुरुष, लड़के-लड़कियाँ, झुककर मगर देख रहे हैं। हमलोग जब हाजिर हुए तब मगर मियां जरा हट गये थे; मन बड़ा क्षुब्ध हुआ। परन्तु देखता हूँ, पानी में "गाधाड़ा" (लम्बी साप की तरह की एक मछली) की तरह एक प्रकार की मछलियाँ झुण्ड की झुण्ड तैर रही हैं। और एक तरह की बिलकुल छोटी मछलियाँ जल पर छिप-छिप करती हुई तैर रही हैं। बीच बीच में एक तरह की बड़ी मछली, *बहुत कुछ हिल्सा की* शक्ल की, तीर की तरह इधर-उधर चक्कर मार रही है। मन में आया, शायद ये मगर के बच्चे हैं। परन्तु पूछने पर मालूम हुआ, नहीं, यह बात नहीं। इनका नाम है "बानिटो"। पहले इनके सम्बन्ध में पढ़ा था, याद आया कि माल-द्वीप से वे सुखा कर हुड़ी नामक जहाज पर लाद कर लाई जाती हैं और यह भी *सुना था, कि इनका* मांस लाल और स्वादिष्ट होता है। अब इनका तेज और बल देखकर बड़ी खुशी हुई। इतनी बड़ी मछली तीर की तरह पानी के भीतर तैर रही है। और उस समुद्र का कांच की तरह पानी—उसकी हर

मगर तथा 'बानिटो'

एक अंग-भंगियाँ देख पड़ रही हैं। आध घण्टा, पौन घण्टा बीत गया—जी ऊबने लगा कि एक चिल्ला उठा—वह—वह ! दस बारह आदमी कह उठे वह आ रहा है ! निगाह उठाकर देखता हूँ, दूर एक बड़ी सी काली चीज़ तैरती हुई आ रही है, पांच सात इंच पानी के नीचे क्रमशः वह वस्तु आगे आने लगी। बड़ा सा चपटा सर नज़र आया; वह निर्द्वन्द्व चाल ! घड़ियालों का सर्र-सर्रपन उसमें नहीं; परन्तु एक दफा गर्दन फेरने से ही एक बड़ी सी भँवर उठी। विभीषण मत्स्य है; गंभीर चाल से चला आ रहा है—और आगे आगे दो एक छोटी मछलियाँ हैं; और कुछ छोटी मछलियाँ उसकी पीठ पर, देह पर, पेट पर, खेलती फिरती हैं। कोई कोई तो "कौतुक कूदि चढ़ेउ ता ऊपर।" यही थे ससांगोपांग मगर महाशय। जो मछलियाँ मगर के आगे आगे जा रही हैं, उन्हें "आड़काठी मत्स्य—पाइलट फ़िश" कहते हैं। वे मगर को शिकार दिखा देती हैं, और शायद कुछ प्रसाद स्वरूप पा भी जाती हैं।

किन्तु मगर का मुँह बाना देख कर वे सफल होती होंगी, कहा नहीं जा सकता। जो मछलियाँ इधर उधर घूमती रहती हैं, पीठ के ऊपर चढ़कर बैठती हैं, उन्हें ही "मगर-चोषक" कहते हैं। मगर की बगल में प्रायः चार इंच चौड़ा चपटा गोलाकार एक स्थान है जैसा अंग्रेज़ी जूते के रबर के तल्ले में खुरखुरा नक़्क़ाशीदार कटा रहता है, वैसा ही उसके बीच में भी कटा रहता है। उसी स्थान पर ये मछलियाँ मगर के चमड़े को चूस कर पकड़ती हैं। इसीलिए मालूम पड़ता है कि वे मगर के देह और

पीठ पर चढ़ कर चलती हैं। ये सब मगर के शरीर पर के कीड़े मकोड़े खाकर जिन्दा रहती हैं। इन दोनों प्रकार की मछलियों के बिना परिवेष्टित हुए मगर चल ही नहीं सकता। मगर इन्हें अपना सहायक और मुसाहिब समझ कर कुछ नहीं कहता। यह मछली एक बंसी में फँस गई। उसे जूते से दबा देने पर जब जूता उठाया गया तो वह जूते के साथ चिपट कर उठने लगी। इसी प्रकार वे मगर के शरीर में चिपट जाती हैं।

सेकण्ड क्लास के लोग बड़े उत्साही थे। उनमें एक फौजी आदमी था जिसके उत्साह की सीमा न थी। वह जहाज में से कहीं से ढूंढकर एक बड़ा सा काँटा ले आया। उसने उस काँटे में एक सेर मांस बाँध दिया और फिर उस काँटे से एक मोटी रस्सी बाँध दी। चार हाथ छोड़कर एक बड़ा-सा काठ सल्का के तौर पर बांधा गया। इसके बाद सल्का सहित डोर झप से पानी में फेंक दी गई। जहाज के नीचे, एक पुलिस की नाव, हमलोगों के आने के समय से पहरा दे रही है कि कहीं बाहर जमीन से हमलोगों को किसी तरह की छुआछूत न हो जाय। उसी नाव पर दो आदमी मौज से खर्राटे ले रहे थे, और यात्रियों के विशेष घृणा के पात्र हो रहे थे। अब वे सब बड़े मित्र हो गये। पुकार पर पुकार दी जाने लगी, अरब मियां आँखें रगड़ते हुए उठ कर खड़े हो गये। कोई बखेड़ा तो कहीं नहीं उठ खड़ा हुआ, यह सोचकर कमर कसने की तैयारी कर रहे थे। ऐसे समय उन्हें मालूम हुआ कि यह पुकार सिर्फ उन्हें धन्नी के आ ... का वह डोर से बँधा

मगर का पकड़ना

हुआ मत्स्य चारे के साथ कुछ दूर हटा देने की अनुरोध-ध्वनि ही थी। तब अपनी सांस छोड़ कर, हँसी के साथ उन्होंने एक बन्दी के सिरे से ठेलकर सलके को दूर हटा दिया और हम लोग उद्ग्रीव होकर—अंगूठों के सहारे खड़े होकर—बरामदे पर झुके हुए, वह आता है—वह आता है, श्रीमगर के लिए "सचकितनयनं पश्यति तव पन्थानम्" हो रहे थे! और जिसके लिए आदमी इस प्रकार बेचैन रहता है, वह हमेशा जैसा करता है, वहीं हुआ—अर्थात् "सखि, श्याम न आये," लेकिन सब दुःखों का एक अन्त है। तब एकाएक जहाज से प्रायः दो सौ हाथ दूर, मिस्ती की मशक के आकार का क्या एक उमड़ पड़ा। साथ ही साथ "वह मगर, वह मगर" की ध्वनि। चुप-चुप—लड़को! मगर भग जायगा। अरे ऐ जी, टोपियाँ जरा उतार लो न, मगर भड़क जो जायगा—इस तरह की आवाजें कर्णकुहरों में जब तक प्रवेश कर रही हैं तब तक वह लवण-समुद्र-जन्मा मगर बंसी-संलग्न मास के गोले को उदराग्नि में भस्मावशेष करने के विचार से शोर के साथ चढ़े हुए पाल की नाव की तरह सों सों करता हुआ सामने आ पहुँचा। और पाच हाथ आ जाय तो मगर का मुँह चारे से लगे। लेकिन वह भीमपुच्छ जरा हिला—सीधी गति चक्राकार में बदल गई। अरे मगर तो चला गया जी! पर शीघ्र ही उसने फिर पूछ जरा तिरछी की और वह प्रकाण्ड शरीर घूम कर बंसी के सामने आ खड़ा हुआ। फिर सनसनाता हुआ आ रहा है—वह मुँह फैलाकर, बंसी पकड़ता ही है। फिर वह पूंछ हिलने लगी, और मगर देह फेर कर दूर चला गया। फिर वह देखो, चक्कर काट कर

आ रहा है,, फिर मुँह फैलाया, वह चारा दबा लिया मुँह से, इसी समय—वह देखो चित्त हो गया; चारा खा लिया—खींचो-खींचो, चालीस पचास आदमी, खींचो जी जान से खींचो। कितना ज़ोर है! कितनी झटापट—कितना फैला मुँह! खींचो-खींचो। पानी से यह उठा, वह पानी में घूम रहा है, फिर चित्त हो रहा है, खींचो-खींचो। अरे, चारा खुल गया! अरे! मगर भाग गया! बताओ भला, तुम लोगों को इतनी क्या जल्दी थी? ज़रा भी समय न दिया चारा खाने का। बिना चित्त हुए कभी खींचा जाता है! अब—"गतस्य शोचना नास्ति"; मगर जी तो बंसी छुड़ाकर लम्बे हुए! "पाइलट फ़िश" को उचित शिक्षा दी या नहीं, यह खबर नहीं मिली—लेकिन जनाब तो सीधे तीर-गति से भगे। इधर वह था भी "बाघा", बाघ की तरह काले काले डोरे किए हुए। ख़ैर बाघा बंसी का सामीप्य छोड़ने के विचार से "पाईलट फिश" तथा "चोषक" के सहित अदृश्य हो गया।

परन्तु अधिक हताश होने की ज़रूरत नहीं,—वह देखो, पलायमान "बाघा" की देह से सटकर एक और विकट "मुँह-चप्टा" चला आ रहा है। अहा! मगर की भाषा नहीं है, नहीं तो "बाघा" ज़रूर पेट की खबर उसे सुनाकर सावधान कर देता। ज़रूर कहता, "देखो जी, सावधान रहना; वहाँ एक नया जानवर आया है, बड़ा स्वादिष्ट और खुशबूदार उसका मांस है, लेकिन कितना सख्त है हाड़ उसका! इतने काल से मगरगिरी कर रहा हूँ, कितनी तरह के जानवर—जीते हुए, मरे हुए, अधमरे—पेट में डाल लिये, कितनी तरह के हाड़ गोड़, ईंट, पत्थर, . कर पेट में भर

है, लेकिन इस हाड़ के सामने और सब मक्खन है जी, मक्खन ! यह देखो न मेरे दांतो की हालत, डाढ़ों की दशा क्या हो गई है, कह कर एक बार वह आकटि-देश-विस्तृत मुख फैलाकर आगन्तुक मगर को अवश्य ही दिखाता। वह भी प्राचीन वयः सुलभ अभिज्ञता के साथ "चैंटा" मत्स्य का पित्त, 'कुल्जे भेटकी' की प्लीहा, शंबुकों का ठंढा शोरबा—आदि आदि समुद्रज महौषधियों का कोई न कोई इस्तेमाल करने के लिए उपदेश देता ही। लेकिन जब यह सब कुछ भी न हुआ, तब या तो मगरों में भाषा का अत्यन्त अभाव है, या उनमें भाषा है, पर पानी में बातचीत नहीं की जा सकती ! अतएव जब तक किसी प्रकार के अक्षरों का मगरों में आविष्कार नहीं होता तब तक उस भाषा का व्यवहार किस तरह हो सकता है ? अथवा, "बाबा" ने आदमियों के लगाव से आदमियों की गन्ध पाई है, इसलिए "मुँहचटा" से असली खबर कुछ न कहकर, मुस्कराकर, "अच्छे तो हो जी" कहकर सरक गया।—"मैं अकेला ही ठगा जाऊँ !"

"आगे चले भगीरथ अपना शंख बजाकर, पीछे पीछे गंगा आवें······" शंखध्वनि तो कुछ सुन नहीं पड़ती, लेकिन आगे आगे चले हैं पारुल्ट मछलियाँ और पीछे पीछे प्रकाण्ड शरीर हिलाते हुए आ रहे हैं "मुँहचटा"। उनके आसपास नृत्य कर रही हैं "मगर-चोपरा" मछलियाँ। अहा, वह लोना भी गँदला जाता है ! दस हाथ दरिया के ऊपर झक-झक करता हुआ तेल बह रहा है, सुगन्ध कितनी दूर तक फैल रही है, यह "मुँह-

घटा" ही कह सकता है। इस पर यह दृश्य भी कैसा! सफ़ेद, लाल, ज़र्द, एक ही जगह! अनन्त अंग्रेजी सुअर का मांस, काले प्रकाण्ड काँटे के चारों ओर बँधा हुआ, पानी के भीतर, रंगबिरंगी गोपियों के मण्डल में कृष्ण की तरह हिल रहा है!!

अब की बार सब लोग चुप हैं, हिलना डुलना नहीं; और देखो जल्दबाज़ी न करना। लेकिन रस्से के पास ही पास रहना। वह बंसी के किनारे किनारे चक्कर काट रहा है! चारे को मुँह में लेकर हिला डुला कर देख रहा है! देखने दो। चुप चुप, अब की बार चित हो गया। वह देखो करवटिया निगल रहा है; चुप निगलने दो। तब "मुँहचटा" यथावसर, करवट लेकर चारा निगलकर ज्योंही चलेगा कि वैसे ही पड़े खिंचाव! चौंका "मुँहचट्टा", मुँह झाड़कर देखा उसे फेंक देने के लिए कि सृष्टि हुई उल्टबांसी की। कांटा गड़ गया और ऊपर से लड़के, बूढ़े और जवान सब 'दे खींच रस्सा पकड़ कर दे खींच' कहने लगे। वह देखो मगर का सर जल से ऊपर उठ आया। खींचो, भाइयो, खींचो। यह लो, आधा मगर तो पानी के ऊपर आ गया। बाप रे बाप! कितना बड़ा मुँह है! यह तो सभी कुछ मुँह और गला है! खींचो, वह देखो, सब हिस्सा पानी से निकल आया। वह—वह, कांटा खूब बिंध गया है, होंठ के आर-पार हो गया है। खींचो। ठहरो, ठहरो; ओ अरब पुलिस माँझी! उसकी पूँछ की तरफ़ एक रस्सी तो बांध दो; नहीं तो, इतने बड़े जानवर को खींच कर उठाना कठिन होगा। सावधान होकर भाई, उसकी पूँछ की मार से घोड़े के पैर भी टूट जाते हैं। फिर खींचो कितना भारी

है। ओ माँ, वह क्या ! ठीक तो है जी, इसके पेट के नीचे से, वह झूल क्या रहा है ! यह तो आँतें हैं। अपने बोझ से अपनी ही आँतें निकल आईं ! खैर, इसे काट दो, पानी में गिर जाय, बोझ घट जायगा ! खींचो, भाइयो, खींचो। अरे यह खून का फुहारा ! कपड़े का अब मोह करने से न होगा। खींचो यह आया। अब जहाज के ऊपर फेंको; भाई ! होशियार, खूब होशियार, यदि यह किसी पर झपटेगा तो उसका पूरा हाथ काट खा जायेगा। और वह पूँछ, सावधान। अब रस्सा छोड़ दो। धप! बापरे! कितना बड़ा मगर है ! सावधानी की मार नहीं, उस काठवाली धन्नी से उसके सर पर मारो, ओ जी, फौजीमेन ! तुम सिपाही हो, यह तुम्हारा काम है।—"ठीक तो है।" खून से भरी देह, कपड़ा; फौजी यात्री वह धन्नी काठवाली उठा कर धमाधम देने लगे मगर के सिर पर और औरतें—अहा कैसी बेदर्दी है, मारो मत आदि आदि कहकर लगीं चिल्लाने; लेकिन देखना भी न छोड़ेंगी ! इसके बाद उस बीभत्स संघटन का यहीं विराम किया जाय। किस तरह उस मगर का पेट चीरा गया, किस तरह खून की नदी बहने लगी, किस तरह वह मगर छिन्न अंग, भिन्न हृदय होकर भी कुछ देर तक काँपता रहा; हिलता रहा, किस तरह उसके पेट से अस्थि, चर्म, माँस, काठ के एकराशि टुकड़े निकले, ये सब बातें अब रहने दो। यहाँ तक जरूर हुआ कि उस दिन मेरे खाने-पीने की नौबत फिर नहीं आई। सब चीजों में उसी मगर की बू मालूम होने लगी।

यह स्वेज, कैनाल खोदने के स्थापत्य का एक अद्भुत निदर्शन है। फार्डिनेण्ड लेसेप्स नाम के एक फ्रांसीसी ने यह

स्वेज़ कैनाल नहर खुदवाई है। भूमध्य सागर और लोहित सागर का संयोग होने पर यूरोप और भारतवर्ष के बीच व्यवसाय-वाणिज्य की एक बहुत बड़ी सुविधा हुई है। मानव-जाति की उन्नति की वर्तमान अवस्था के लिए जितने कारण प्राचीन काल से काम कर रहे हैं, उसके बीच में जान पड़ता है, भारत का वाणिज्य सब से प्रधान है। अनादि काल से उर्वरता और वाणिज्य-शिल्प में, भारत की तरह क्या कोई और देश है? दुनिया के जितने सूती कपड़े हैं, रुई, पाट, नील, लाख, चावल, हीरे, मोती आदि का व्यापार १०० वर्ष पहले तक था, यह कुल भारतवर्ष से जाया करता था; इसके अलावा नफ़ीस रेशमी पश्मीना कमख़ाब आदि इस देश की तरह कहीं भी न होता था।

सब जातियों की उन्नति का कारण भारत का व्यापार इधर लोंग, इलायची, मिर्च, जायफल, जावित्री आदि नाना प्रकार के मसाले का स्थान भी भारतवर्ष ही है। इसलिए बहुत प्राचीन काल से ही जो देश जब सभ्य होता था, उसे उन सब वस्तुओं के लिए भारत के ही भरोसे पर रहना पड़ता था। एक स्थल मार्ग से, अफ़ग़ानी, ईरानी देश होकर और दूसरा एक पानी के रास्ते, रेड सी हो कर। सिकन्दरशाह ने ईरान विजय के बाद, नियार्हस नामक सेनापति को जल-मार्ग से सिन्धु नद के मुख से समुद्र पार होकर, लोहित समुद्र से रास्ता देखने के लिए भेजा था। बाबिलन ईरान, ग्रीस, रोम आदि प्राचीन देशों का ऐश्वर्य कहाँ तक भारतवर्ष के वाणिज्य पर टिका हुआ था, यह बहुत से लोग नहीं जानते। रोम के ध्वंस के बाद मुसलमानी बग़दाद और

इटैलियन वेनिस और जेनोआ भारतीय वाणिज्य के प्रधान पाश्चात्य केन्द्र हुए थे। जब तुर्कों ने रोम-साम्राज्य दखल करके इटैलियनों के लिए भारत के वाणिज्य का रास्ता बन्द कर दिया, तब जेनोआ निवासी कोलम्बस (क्रिस्टोफोर कोलम्बस) ने, आटलांटिक पार हो कर भारतवर्ष में आने का नया रास्ता निकालने की चेष्टा की, फल हुआ अमेरिका महाद्वीप की अविष्क्रिया। अमेरिका पहुँचने पर भी कोलम्बस का भ्रम नहीं गया कि वह भारतवर्ष नहीं है। उसी लिए अमेरिका के आदिम निवासी लोग अब भी इण्डियन नाम से पुकारे जाते हैं। वेदों में सिन्धुनद के "सिन्धु", "इन्दु" दोनों नाम पाये जाते हैं; ईरानी लोगों ने उसे "हिन्दू" तथा ग्रीक लोगों ने "इन्डुस" बना डाला। उसीसे इण्डिया—इण्डियन बना। मुसलमानी धर्म के उदय के समय हिन्दू ठहराये गये काले (बुरे) जिस तरह अब "नेटिव"।

इधर पोर्तगीज लोगों ने भारत के लिए नया रास्ता अफ्रिका की प्रदक्षिणा करते हुए खोज निकाला। भारत की लक्ष्मी पोर्तगाल के ऊपर सदय हुई; बाद में फ्रासीसियों, डचों, दिनेमार (Danes) और अंग्रेजों पर। अंग्रेजों के यहाँ भारत का वाणिज्य और राजस्व सभी कुछ है; इसीलिए, अंग्रेज अब सब के ऊपर बड़ी जात है। परन्तु अब अमेरिका आदि देशों में भारत की चीजें, बहुत जगह, भारत से भी उत्तम उत्पन्न होती हैं। इसीलिए भारत की अब उतनी कद्र नहीं। यह बात यूरोपीय लोग मानना नहीं चाहते। भारत नेटिवों से भरा हुआ है, भारत जो उनके धन और सभ्यता का प्रधान अवलम्ब

यूरोप भारतीय सभ्यता का सम्पूर्ण ऋणी

भारत की छोटी जातियाँ पूजनीय हैं

और सहायक है, यह बात नहीं मानना चाहते, समझना भी नहीं चाहते और हम लोग भी बिना समझाये छोड़ेंगे ! सोचकर देखो बात क्या है। वे जो लोग किसान हैं, वे कोरी, जुलाहे जो भारत के नगण्य मनुष्य हैं, विजाति-विजित स्वजाति–निन्दित छोटी छोटी जातियाँ हैं, वही लगातार चुपचाप काम करती जा रही हैं, अपने परिश्रम का फल भी नहीं पा रही हैं। परन्तु धीरे-धीरे प्राकृतिक नियम से दुनिया में कितने परिवर्तन होते जा रहे हैं। देश, सभ्यता तथा सत्ता उलटते पलटते जा रहे हैं। हे भारत के श्रमजीवियो, तुम्हारे नीरव, सदा ही निन्दित हुए परिश्रम के फलस्वरूप बाबिल, ईरान, अलेक्जन्द्रिया, ग्रीस, रोम, वेनिस, जेनोआ, बगदाद, समरकन्द, स्पेन, पोर्तगाल, फ्रांसीसी, दिनेमार, डच और अंग्रेजों का क्रमान्वय से आधिपत्य हुआ और उनको ऐश्वर्य मिला है। और तुम ? कौन सोचता है इस बात को। स्वामीजी ! तुम्हारे पितृपुरुष दो दर्शन लिख गये हैं, दस काव्य तैयार कर गये हैं, दस मन्दिर उठवा गये हैं; तुम्हारी बुलन्द आवाज से आकाश फट रहा है; और जिनके रुधिर-स्राव से मनुष्य जाति की यह जो कुछ उन्नति हुई है उनके गुणों का गान कौन करता है ? लोकजयी धर्मवीर, रणवीर, काव्यवीर, सब की आँखों पर, सब का पूज्य है; परन्तु जहाँ कोई नहीं देखता, जहाँ कोई एक वाहवाह भी नहीं करता, जहाँ सब लोग घृणा करते हैं, वहाँ वास करती है अपार सहिष्णुता, अनन्य प्रीति और निर्भीक कार्यकारिता; हमारे गरीब, घर-द्वार पर दिनरात मुँह बन्द करके कर्तव्य करते जा रहे हैं, उसमें क्या वीरत्व नहीं है ? बड़ा काम

आने पर बहुतेरे वीर हो जाते हैं, दस हजार आदमियों की वाह-वाह के सामने कापुरुष भी सहज हीं में प्राण दे देता है। घोर स्वार्थ-पर भी निष्काम हो जाता है; परन्तु अत्यन्त छोटे से कार्य में भी सब के अज्ञात भाव से जो वैसे ही निःस्वार्थता, कर्तव्यपरायणता दिखाते हैं वही धन्य हैं—वे तुमलोग हो—भारतवर्ष के हमेशा के पैरों तले कुचले हुए श्रमजीवियो!—तुम लोगों को मैं प्रणाम करता हूँ।

स्वेज़ कैनाल का इतिहास

यह स्वेज नहर भी बहुत पुरानी है। प्राचीन मिश्र के फैरो बादशाह के समय कुछ लवणाम्बु-जल-भूमि (Lagoons) जोड़कर एक नहर उभय-समुद्र स्पर्शी तैयार की गयी। मिश्र में रोमराज्य के शासनकाल में भी कभी कभी उस नहर को मुक्त रखने की चेष्टा की गई थी। मुसल्मान सेनापति अमरू ने मिश्र विजय करके उस नहर का बालू निकाल और उसके अंग प्रत्यंग को बदल कर एक प्रकार से उसे नया कर डाला।

स्वेज़ में जहाज़ों के आने जाने का बन्दोबस्त

इसके बाद किसीने ज्यादा कुछ नहीं किया। तुर्की सुलतान के प्रतिनिधि मिश्र खेदिव इस्माइल ने फ्रांसीसियों के परामर्श और अधिकांशतः उनके अर्थ से यह नहर खुदवाई थी। इस नहर के लिए यह एक कठिनाई है कि मरु-भूमि के भीतर से जाने के कारण यह बालू से भर जाती है। इस नहर के भीतर बड़ा व्यवसायी जहाज एक ही दफा जा सकता है। सुना है, बहुत बड़ा जंगी जहाज अथवा व्यवसाय का

जहाज बिल्कुल ही नहीं जा सकता। अब, एक जहाज जाता है और एक आता है। इन दोनों में टक्कर हो सकती है, इस विचार से नहर कुछ भागों में बाँट दी गई है और हर भाग के दोनों मुहानों में कुछ जगह ऐसी चौड़ी कर दी गई है कि दो तीन जहाज एक जगह रह सकें। भूमध्यसागर के मुहाने में प्रधान कार्यालय है और हर विभाग में रेल्वे स्टेशन की तरह स्टेशन है। उस प्रधान आफिस से जहाज के नहर में प्रवेश करने के बाद ही से क्रमशः तार से खबर जाती है। कितने जहाज आते हैं और कितने जाते हैं और प्रति क्षण कौन जहाज कहाँ पर है, इसकी खबर जा रही है और एक बड़े नक्शे में इसके निशान लगाये जा रहे हैं। एक के सामने कहीं एक और न आजाए,—इसलिए एक स्टेशन की आज्ञा पाये बिना एक जहाज दूसरे स्टेशन को नहीं जा सकता।

यह स्वेज नहर फ्रांसीसियों के हाथ में है, यद्यपि नहर कम्पनी के अधिकांश शेयर इस समय अंग्रेजों के हाथ में हैं, फिर भी सब काम फ्रांसीसी लोग ही करते हैं—यह राजनीतिक मीमांसा है।

भूमध्य के तीर पर वर्तमान सभ्यता का जन्म

अब भूमध्यसागर आया। भारतवर्ष के बाहर ऐसा स्मृतिपूर्ण स्थान दूसरा नहीं है—एशिया, अफ्रीका प्राचीन सभ्यता के अवशेष हैं। एक जातीय रीति-नीति, भोजन-पान समाप्त हुआ; दूसरे प्रकार की आकृति-प्रकृतियों, आहार-विहारों, परिच्छदों, आचार-व्यवहारों का रम्भ हुआ—योरप आया। सिर्फ इतना ही नहीं, अनेक वर्णों, क जातियों, सभ्यता, विद्या और आचारों के बहुशताब्दिव्यापी

जिस महा सम्मिश्रण के फल स्वरूप यह आधुनिक सभ्यता पैदा हुई है, उस सम्मिश्रण का महाकेन्द्र यहीं पर है। जो धर्म, जो विद्या, जो सभ्यता, जो महावीर्य आज भूमण्डल पर व्याप्त है, भूमध्यसागर के चारों ओर उसकी जन्मभूमि है। उस दक्षिण में भास्कर्य विद्या का आगर, बहु धन-धान्य-प्रसू, अति प्राचीन मिश्र है; पूर्व में फिनीसियन, फिलिस्टीन, यहूदी, साहसी बाबिल, आसीर और ईरानी सभ्यता की प्राचीन रंगभूमि—ऐशिया माइनर तथा उत्तर की ओर सर्वाश्चर्यमयी ग्रीक जाति का लीलाक्षेत्र है।

जगत् की प्राचीन कहानी

स्वामीजी ! देश-नदी-पहाड़-पर्वतों की कथाएँ तो बहुत तुमने सुनीं, अब कुछ प्राचीन कहानियाँ सुन लो। ये प्राचीन कहानियाँ बड़ी अद्भुत हैं। कहानियाँ ही नहीं—यह सत्य है, मनुष्य जाति का यथार्थ इतिहास है। ये सब प्राचीन देश काल-सागर में प्रायःलीन थे। जो कुछ आदमियों को मालूम था, वह प्रायः प्राचीन यवन ऐतिहासिकों के अद्भुत आख्यायिकाओं के रूप के प्रबन्ध अथवा बाइबिल नामक यहूदी पुराणों का अत्यद्भुत वर्णन मात्र है। अब पुराने पत्थर, मकानात, टाली में लिखा किताबें और भाषा-विश्लेष शत मुखों से कहानियाँ सुना रहे हैं। ये कहानियाँ इस समय सिर्फ शुरू की गई हैं। लेकिन अभी ही कितनी ताज्जुब में डालने वाली बातें निकल पड़ी हैं। बाद को क्या निकलेगा कौन जाने ? देश-देशान्तरों के बड़े बड़े पण्डित दिन रात एक टुकड़ा शिलालेख या टूटा बर्तन या एक मकान अथवा एक टाली लेकर दिमाग लड़ा रहे हैं, और उस काल की लुप्त वार्तायें निकाल रहे हैं।

जब मुसलमान नेता ओसमान ने कानस्टांटिनोपल् पर अधिकार किया, समस्त पूर्ण येरप में इस्लाम की ध्वजा सगर्व उड़ने लगी तब प्राचीन ग्रीकों की जो सब पुस्तकें, विद्या बुद्धि उनके निर्वीर्य वंशधरों के पास छिपी हुई थी, वह पश्चिमी-योरोप में भागे हुए ग्रीकों के साथ साथ फैल गई। ग्रीकलोग रोम के पैरों तले रहने पर भी विद्या और बुद्धि में रोमवालों के गुरु थे। यहाँ तक कि ग्रीकों के क्रिस्तान होने और ग्रीक भाषा में क्रिस्तान धर्मग्रन्थों के लिखे जाने के कारण तमाम रोम साम्राज्य पर क्रिस्तान धर्म की विजय हुई। लेकिन प्राचीन ग्रीक जिन्हें हम लोग यवन कहते हैं, जो लोग योरोपी सभ्यता के आदि गुरु हैं, उनकी सभ्यता का परम उत्थान क्रिस्तानों के बहुत पहले हुआ। क्रिस्तान होने के समय से ही उनकी विद्या-बुद्धि सब लुप्त हो गई; लेकिन हिन्दुओं के घरों में जैसे पूर्व पुरुषों की विद्या-बुद्धि कुछ रक्षित है, उसी तरह क्रिस्तान ग्रीकों के पास थी; वही सब किताबें चारों तरफ फैल गईं। उसीसे अंग्रेज, जर्मन, फ्रेंच आदि जातियों में पहली सभ्यता का उन्मेष हुआ। ग्रीक विद्या के सीखने की एक धूम सी मच गई। पहले जो कुछ उन पुस्तकों में था, वह हाड़ सहित निगला गया। इसके बाद जब बुद्धि मार्जित होने लगी और क्रमशः पदार्थविद्या का अभ्युत्थान होने लगा, तब उन सब ग्रन्थों का समय, प्रणेता, विषय आदि की यथातथ्य गवेषणा चलने लगी। क्रिस्तानों के धर्मग्रन्थों को छोड़कर प्राचीन क्रिस्तान ग्रीकों के कुछ धर्मग्रन्थ पर मतामत

प्राचीन ग्रीस तथा रोम का सम्बन्ध

ग्रीक विद्या की चर्चा से युरोपीय सभ्यता का जन्म तथा पुरातत्व-विद्या की उत्पत्ति

ज़ाहिर करने में कोई बाधा तो थी नहीं, इसलिए बाह्य और आभ्यन्तरिक समालोचन की एक विद्या निकल पड़ी।

ग्रन्थोक्त विषयों के सत्यासत्य निर्णय के उपाय

सोचो, किसी पुस्तक में लिखा है कि अमुक समय अमुक घटना हुई थी। किसी ने कृपा पूर्वक किसी पुस्तक में कुछ लिख दिया है, इसीलिए क्या सब सच हो गया! विशेषतः उस काल के आदमी बहुत सी बातें कल्पना से लिखा करते थे। दूसरे, प्रकृति—यहाँ तक कि पृथ्वी के सम्बन्ध में भी ज्ञान थोड़ा था; यही सब कारण ग्रन्थोक्त विषयों के सत्यासत्य निर्णय में विषम सन्देह पैदा करने लगे; सोचो, एक ग्रीक ऐतिहासिक ने लिखा है, कि अमुक समय भारतवर्ष में चन्द्रगुप्त नामक एक राजा था। फिर यदि भारतवर्ष में भी उसी समय उस राजा का उल्लेख दीख पड़े, तो विषय का बहुत कुछ प्रमाण निस्सन्देह हो जाता है। इसी प्रकार यदि चन्द्रगुप्त के कुछ रुपये मिले अथवा उनके समय की एक इमारत मिल जाय जिसमें कि उनका उल्लेख है, तो फिर और किसी तरह का सन्देह या कमज़ोरी न रह जायगी।

प्रथम उपाय

सोचो, किसी दूसरी पुस्तक में लिखा है कि एक यह घटना सिकन्दर बादशाह के समय की है, लेकिन उसके भीतर दो एक रोम के बादशाहों का ज़िक्र आ गया है। यह इस तरह आया है कि प्रक्षिप्त होना सम्भव नहीं—तो वह पुस्तक सिकन्दर बादशाह के समय की नहीं है, यह सिद्ध हो गया।

द्वितीय उपाय

साहस के साथ यहूदी और क्रिस्तान पुस्तकों के साथ भी बर्ताव करेंगे। मैं यह बात क्यों कहता हूँ, इसका एक उदाहरण यह है, मासपेरो नाम के एक महापण्डित, मिश्र पुरातत्व के विख्यात लेखक ने "इस्तोआर आन्सियन ओरि आँताल" नाम से मिश्र वालों तथा बाबिलों का एक प्रकाण्ड इतिहास लिखा है। कई साल पहले उक्त ग्रन्थ का एक अंग्रेज पुरातत्वविद् द्वारा किया हुआ अंग्रेजी में अनुवाद पढ़ा था। अब की बार ब्रिटिश म्यूजियम के एक अध्यक्ष से मिश्र और बाबिलन सम्बन्धी कुछ पुस्तकों के विषय पर पूछते हुए मासपेरो के ग्रन्थ का उल्लेख आया। इस पर यह सुनकर कि मेरे पास उक्त ग्रन्थ का अनुवाद है, उन्होंने कहा कि इससे काम न चलेगा, अनुवादक कुछ कट्टर क्रिस्तान है। इसलिए जहाँ जहाँ मासपेरो का अनुसन्धान क्रिस्तान धर्म को धक्का पहुँचाता है, वह सब गोलमटोल कर दिया गया है। मूल फ्रांसीसी भाषा में ग्रन्थ पढ़ने के लिए कहा। पढ़कर देखता हूँ, तो बिल्कुल ठीक। अब यह तो एक विषम समस्या हो गई है। जानते तो हो कि धर्म की कैसी कट्टरता है——

फ्रांसीसी पुरातत्त्वविद् मासपेरो

सत्यासत्य सब खासी खिचड़ी के रूप में। तभी से उन सब गवेषणावाले ग्रन्थों के अनुवाद से बहुत कुछ श्रद्धा घट गई है।

अंग्रेज अनुवादकों की कट्टरता

एक और नई विद्या पैदा हुई है, जिसका नाम जाति-विद्या है; अर्थात् आदमी का रंग, बाल, चेहरा, सिर की गढ़न, भाषा आदि देखकर श्रेणीबद्ध करना।

जाति-विद्या

जर्मन लोग सब विद्याओं में विशारद होने पर भी संस्कृत और प्राचीन असीरिया की विद्याओं में विशेष पटु हैं; बर्गन आदि जर्मनी पण्डित इसके निदर्शन हैं। फ्रांसीसी प्राचीन मिश्र के तत्वोद्धार में विशेष सफल हुए हैं।—मासपेरो आदि—सब फ्रांसीसी हैं। डच लोग यहूदी और प्राचीन क्रिश्चान धर्म के विश्लेषण में विशेष प्रतिष्ठित हैं—कूना आदि संसार प्रसिद्ध लेखक हैं।

मिश्र जाति पण्डित मण्डली

अंग्रेज लोग पहले अनेक विद्याओं का आरम्भ करके फिर हट जाते हैं।

इन सब पण्डितों के मत कुछ कहूँ। यदि अच्छा न लगे तो उनके साथ तूल-तकरार कर मुझे दोष न देना।

हिन्दू, यहूदी, प्राचीन बाबीलो, मिश्री आदि प्राचीन जातियों के मत से सब आदमी एक आदिम माता-पिता से पैदा हुए हैं, यह बात अब बहुत लोग नहीं मानना चाहते।

सब काले, बिना नाक के मोटे होंठवाले, ढालू कपाल, और घुंघराले बाल वाले काफियों को तुमने देखा है? प्रायः उसी तरह की गठन है, सिर्फ आकार के छोटे हैं; बाल इतने घुंघराले नहीं, सौंताली, अन्दमानी भीलों को देखा है? पहली श्रेणी वाले को निग्रो कहते हैं, इनकी निवासभूमि अफ्रिका है। दूसरी जाति का नाम है नेग्रिटो—छोटे निग्रो; ये लोग पुराने जमाने में अरब के कुछ अंश

निग्रो तथा नेग्रिटो जातियों के चेहरे

में, यूफ्रटिस के तटों के कुछ अंशों में, फारस के दक्षिण भाग में, तमाम भारतवर्ष में, अन्दमान आदि द्वीपों में, यहाँ तक कि आस्ट्रेलिया में भी निवास करते थे। आधुनिक समय में भी भारतवर्ष के किसी किसी घोर जंगल में, अन्दमान और आस्ट्रेलिया में ये लोग मौजूद हैं।

मोगल तथा मोगलाइड् अथवा तूरानी जाति

ल्हेपचा, भूटिया, चीनी आदि को तुमने देखा है?—सफेद रंग या पीला, सीधे और काले बाल वाले; काली आँखें, लेकिन वे तिरछी बैठाई हुई, मूंछ-दाढ़ी थोड़ी सी, चपटा मुँह, आँखों के निचले दोनों भाग बहुत ऊंचे।

मलायी, नेपाली, बर्मी, स्यामी, जापानी देखे हैं? वे लोग उसी गठन के हैं, लेकिन आकार के छोटे हैं।

इस श्रेणी की दोनों जातियों के नाम मोगल और मोगला-इड् यानी छोटे मोगल हैं। मोगल जाति इस समय अधिकतर एशिया-खण्ड पर दखल कर बैठी है। यही मोगल हैं, जो अनेक शाखाओं में बँटकर, काले मुँह वाले हून, चीनी, तातारी, तुर्क, मानचू, किरगिज आदि विविध शाखाओं में बँटकर, एक चीनियों और तिब्बतियों के सिवाय, तम्बू लेकर आज इस देश में, कल उस देश में, भेड़, बकरियाँ, ढोर और घोड़े चराते फिरते, और घात मिलने पर टिड्डियों की तरह टूटकर दुनिया उलट-पुलट कर देते थे। इन लोगों का एक नाम तूरानी है। ईरान-तूरान—वही तूरान।

रंग काला, परन्तु बाल सफेद, सीधी नाक, सीधी काली आँखें—प्राचीन मिश्र, प्राचीन बाबिलोनिया में वास करते थे और आजकल भारतवर्ष भर में हैं। विशेषतः दक्षिण में वास करते हैं; योरप में भी एक आध जगह उनके निशान मिलते हैं, यह एक जाति है, इनका पारिभाषिक नाम है—द्राविड़ी।

द्राविड़ी जाति

सफेद रंग, सीधी आँखें परन्तु कान नाक, बकरे के मुँह की तरह टेढ़े और सिर मोटा, कपाल ढालू, होंठ मोटे हुए—जिस तरह उत्तर अरब के आदमी, वर्तमान यहूदी, प्राचीन बाबिल, असीरी, फिनिस आदि; इनकी भाषा भी एक तरह की है, इनका नाम है सेमिटिक्।

सेमिटिक् जाति

और जो लोक संस्कृत की तरह भाषा बोलते हैं, सीधी नाक, मुंह, आँखें, रंग सफेद, बाल काले या भूरे, आँखें काली या नीली इनका नाम है आरियन्।

आरियन् या आर्य

वर्तमान समस्त जातियाँ इन्हीं सब जातियों के मिश्रण से हुई हैं। उनके भीतर जिस जाति का भाग जिस देश में अधिक है, उस देश की भाषा और आकृति अधिकांश उसी जाति की तरह है। गर्म मुल्क होने पर रंग काला और ठंडा मुल्क होने पर सफेद होता है, यह बात यहाँ के बहुत से लोग नहीं मानते। काले और सफेद के अन्दर जो वर्ण है, बहुतों के मत से वे भिन्न भिन्न जातियों के मिश्रण से तैयार हुए हैं।

वर्तमान जातियाँ संमिश्रित

मिश्र और प्राचीन बाबिलों की सभ्यता पण्डितों के मत से सब से प्राचीन है। इन सब देशों में क्राइस्ट से पहले ६००० वर्ष या उससे अधिक समय के मकानात मिलते हैं। भारतवर्ष में ज्यादा से ज्यादा चन्द्रगुप्त के समय का अगर कुछ मिला हो, तो वह सिर्फ क्राइस्ट से पहले ३०० वर्ष का होता है। इसके पहले के मकानात अभी नहीं मिले।* परन्तु इसके बहुत पहले की पुस्तकें मिली हैं, जो और किसी देश में नहीं मिलतीं। पण्डित बालगंगाधर तिलक ने साबित किया है कि हिन्दुओं के "वेद" कम से कम क्राइस्ट के ५००० वर्ष पहले इसी रूप में मौजूद थे।

यही भूमध्य सागर के प्रान्त हैं,—जो यूरोपीय सभ्यता आजकल विश्वविजयी हो रही है उसकी जन्मभूमि यही है। इस तटभूमि पर बाबिली, फिनिक, यहूदी आदि सेमिटिक जातिवर्ग और ईरानी, यवन, रोमक आदि आर्य जाति के सम्मिश्रण से वर्तमान यूरोपीय सभ्यता हुई है।

वर्तमान यूरोपीय सभ्यता

"रोजेटा स्टोन" नामक एक वृहत् शिलालेख-खण्ड मिश्र में मिला है। उस पर जीव-जन्तुओं की पूंछ आदि के तौर पर चित्रलिपि से लिखा हुआ एक लेख है। उसके नीचे और एक प्रकार का लेख है, तथा सब से नीचे ग्रीक भाषा के समान एक लेख है। एक विद्वान् ने यह अनुमान किया कि ये तीनों

मिश्र-तत्त्व

* हरप्पा तथा सिन्ध में महेन्जदारो नामक सभ्यता के अनेक चिह्न मिले हैं।-सं०

लेख एक ही हैं और उन्होंने इन प्राचीन मिश्र जाति के लेखों का पुनः पठन 'कप्त' अक्षरों की सहायता से किया। (कप्त ईसाइयों की एक जाति है जो अब भी मिश्र देश में पाई जाती है और इस जाति के लोग प्राचीन मिश्र वालों की सन्तान समझे जाते हैं।) उसी तरह बाबिलों की ईंटें और खपरों पर लिखी हुई त्रिकोण अक्षरों वाली लिपी का भी पुनः पठन हुआ। इधर, भारतवर्ष में हलाकार अक्षरों वाले कुछ लेख महाराजा अशोक की समसामयिक लिपि के नाम से आविष्कृत हुए। इससे अधिक प्राचीन लिपि भारतवर्ष में नहीं मिली। मिश्र भर में अनेक प्रकार के मन्दिर, स्तम्भ, शवाधार आदि पर जिस तरह की लिपियाँ लिखी हुई थीं, क्रमशः वे सब पढ़ी गईं, और धीरे धीरे उनसे मिश्र की प्राचीनता अधिक स्पष्ट होगई है।

भारतवर्ष से मिश्र में आगमन

मिश्रवालों ने समुद पार के "पन्ट" नामक दक्षिण देश से मिश्र में प्रवेश किया था। कोई कोई कहते हैं कि वह पन्ट ही वर्तमान मालाबार है, और मिश्री और द्रविड़ एक ही जाति है। इनके प्रथम राजा का नाम है "मेनुस"। इनका प्राचीन धर्म भी किसी किसी अंश में हमारी पौराणिक कथाओं की तरह है। "शिबू" देवता "नुई" देवी के द्वारा आच्छादित थे, बाद को एक दूसरे देवता "शू" ने आकर बलपूर्वक "नुई" को उठा लिया। "नुई" का शरीर आकाश हुआ, दोनों हाथ और दोनों पैर हुए आकाश के चारों स्तम्भ। और "शिबू" हुए पृथ्वी। "नुई" के पुत्र-कन्या "असिरिस" और

" इसिस " मिश्र के प्रधान देव-देवी हैं, और उनके पुत्र " होरस "

हिन्दुओं के समान देवदेवी तथा गो पूजा

सर्वाराध्य हैं। इन तीनों की एक ही साथ उपासना होती थी। " इसिस " गोमाता के रूप से भी पूजित होती हैं।

पृथ्वी के " नील " नद की तरह आकाश में भी इसी प्रकार का नीलनद है—पृथ्वी का नीलनद उसका अंशविशेष है। इनके

नीलनद तथा सूर्यदेव

मत से सूर्यदेव नाव पर चढ़कर पृथ्वी की प्रदक्षिणा करते हैं, कभी कभी ' अहि ' नामक सर्प उन्हें ग्रास करता है, तब ग्रहण पड़ता है।

चन्द्रदेव पर एक शूकर कभी कभी आक्रमण करता है और खण्ड खण्ड कर डालता है, बाद को पन्द्रह दिन उन्हें अच्छे होने में

चन्द्रदेव

लग जाते हैं। मिश्र के सब देवता, कोई " शृगालमुख " कोई " बाजमुख " कोई " गोमुख " इत्यादि हैं।

साथ ही यूफ्रेटिस के तट पर एक दूसरी सभ्यता का उत्थान हुआ था। उनके भीतर " बाल ", " मोलख ", " ईस्तारत " और

बाबिलों की देव-देवी-मोलख, ईस्तारत इत्यादि

" दमूज़ी " प्रधान हैं। " ईस्तारत " " दमूज़ी " नामक एक मेष-पालक के प्रणयपाश से बद्ध हो गईं। एक वराह ने दमूज़ी को मार डाला। पृथ्वी के नीचे, परलोक में, ईस्तारत दमूज़ी को खोजने गईं। वहाँ " अल्लात् " नाम की एक भयंकरी देवी ने उन्हें बड़ा कष्ट दिया। अन्त में ईस्तारत ने कहा कि मुझे अगर दमूज़ी न मिलेंगे तो मैं

मर्त्यलोक फिर न जाऊँगी। बड़ी मुश्किल हुई—वे ही कामदेव, उनके बिना आगे आदमी, जीव, जन्तु, पेड़, पौधे फिर पैदा नहीं हो सकते। तब देवताओं ने यह सिद्धान्त ठहराया कि हर साल दमूजी चार महीने रहेंगे परलोक में यानी पाताल में, और आठ महीने रहेंगे मर्त्यलोक में। तब ईस्तारत लौट आई—वसन्त आया, शस्यादि पैदा होने लगे।

यही "दमूजी", "आदुनोई" या "आदुनिस" के नाम से सिद्ध हैं। कुछ सेमिटिक् जातियों का धर्म किञ्चित् अवान्तर भेद से प्रायः एक ही तरह का था। बाबिली, यहूदी, फिनिक और बाद के अरबों की एक ही तरह की उपासना थी। प्रायः सभी देवताओं का नाम मोलख (जिस शब्द के रूप बंगला भाषा में मालिक, "मुल्लुक" आदि अब भी हैं) अथवा "बाल" है; केवल कुछ अवान्तर भेद था। किसी किसी का मत है—ये "अल्लात" देवता बाद को अरबों के "अल्लाह" हुए।

इन सब देवताओं की पूजा के भीतर कुछ भयानक और जघन्य कार्य भी थे। "मोलख" या "बाल" के पास पुत्र-कन्या को जीते ही जला देते थे। "ईस्तारत" के मन्दिर में स्वाभाविक और अस्वाभाविक कामसेवा प्रधान अंग थी।

यहूदी जाति का इतिहास बाबिलों की अपेक्षा बहुत आधुनिक है। पण्डितों के मत से बाइबिल नामक धर्मग्रन्थ क्राइस्ट से पहले ५०० शताब्दी से शुरू होकर क्राइस्ट के बाद तक लिखा था। बाइबिल के अनेक अंश जो

बाइबिल का समय

पहले के कहकर प्रतिष्ठित किये गये हैं, बहुत बाद के लिखे गये हैं। इस बाइबिल के भीतर की स्थूल कथायें बाबिल जाति की हैं। बाबिलों का सृष्टि-वर्णन, जलप्लावन-वर्णन, आदि अधिकांशतः बाइबिल ग्रन्थ में संगृहित हुए हैं। इस पर पारसी बादशाह लोग जब एशिया माइनर पर राज्य करते थे, उस समय बहुत कुछ पारसी मतों का बाइबिल में प्रवेश हुआ है, बाइबिल के प्राचीन भाग के मत से यह संसार ही सब कुछ है। आत्मा या परलोक नहीं है। नये भाग में पारसियों का परलोक, भूतों का पुनरुत्थान आदि दृष्टिगोचर होता है और शैतान-वाद तो बिल्कुल ही पारसियों का है।

बाबिल तथा पारसी धर्ममत-ग्रहण

यहूदी धर्म का प्रधान अंग "याभे" नामक "मोलख" की पूजा है। लेकिन यह नाम यहूदी भाषा का नहीं। किसी किसी के मत से यह मिश्री शब्द है। लेकिन कहाँ से आया यह कोई नहीं जानता। बाइबिल में वर्णन है कि यहूदी लोग बद्ध होकर बहुत दिनों तक मिश्र में थे। ये सब बातें इस समय कोई विशेष मानता नहीं और "इब्राहीम" "इसहाक" "यूसुफ" आदि गोत्रपिताओं के रूपक हैं, यह साबित किया जाता है।

यहूदी धर्म

यहूदी लोक "याभे" नाम का उच्चारण नहीं करते थे; उसकी जगह "आदुनोई" करते थे। जब यहूदी लोग इस्रेल और एफ्रेम दो शाखाओं में विभक्त हो गये, तब दोनों देशों में दो प्रधान मन्दिर तैयार हुए, जिसमें "याभे" देवता की एक नर-नारी संयुक्त मूर्ति एक सन्दूक के अन्दर रखी जाती थी। द्वार पर बड़ा सा एक

पुंचिह्न स्तम्भ था। इरूम में "याभे" देवता, सोने से बने हुए वृष की मूर्ति पर पूजित होते थे।

दोनों जगहों में, ज्येष्ठ पुत्र को देवता के पास जाते हुए अग्नि में आहुति देते थे और स्त्रियों का एक दल उन देवमन्दिरों में वास करता था। वे स्त्रियाँ मन्दिर के भीतर ही वेश्यावृत्ति करके जो कुछ पैदा करती थीं, सब मन्दिर के खर्च में लगता था।

क्रमशः यहूदियों के भीतर एक दल का प्रादुर्भाव हुआ; वे लोग गीत या नृत्य से अपने भीतर देवता का आवेश करते थे।

नबी तथा पारसी धर्म

इनका नाम नबी या प्राफेट (Prophet) था। इनमें बहुत से लोग ईरानियों के संसर्ग से मूर्तिपूजा पुत्रबलि, वेश्यावृत्ति आदि के विपक्ष में हो गये। क्रमशः बलि की जगह हुई सुन्नति। वेश्यावृत्ति, मूर्ति आदि क्रमशः उठ गई। क्रमशः उस नबी सम्प्रदाय के भीतर से क्रिस्तान धर्म की सृष्टि हुई।

ईसा नाम के कोई पुरुष कभी पैदा हुए थे या नहीं, इस विषय पर भयानक वितण्डा हो चला। "न्यू टेस्टामेण्ट" की जो

क्या ईसा ऐतिहासिक व्यक्ति हैं? हायर क्रिटिसिज़्म

चार पुस्तकें हैं, उनमें सेण्ट जान नामक पुस्तक तो बिल्कुल अग्राह्य हो गई है। बाकी तीन, को एक प्राचीन पुस्तक देखकर लिखी गई हैं, यह सिद्धान्त है; वह भी ईसा मसीह का जो समय निर्दिष्ट हुआ है, उसके बहुत बाद।

उस पर, जिस समय ईसा के पैदा होने की प्रसिद्धि है, उस मय उन यहूदियों के भीतर दो आदमी ऐतिहासिक पैदा हुए थे, जोसिफुस" और "फिलो" । इन लोगों ने यहूदियों के भीतर छोटे टे सम्प्रदायों का भी उल्लेख किया है, लेकिन ईसा या क्रिस्तानों ा नाम भी नहीं है, अथवा रोमन जज ने उन्हें क्रूस पर मारने का क्म दिया था इसकी भी कोई चर्चा नहीं है । जोसिफुस की पुस्तक छ पंक्तियाँ थीं, वह भी अब प्रक्षिप्त प्रमाणित हुई हैं ।

रोमन लोग उस समय यहूदियों पर राज्य करते थे । सब ीयाएँ ग्रीक लोग सिखलाते थे । इन सभी लोगों ने यहूदियों के ेषय पर बहुत सी बातें लिखी हैं, परन्तु ईसा या क्रिस्तानों की कोई त नहीं लिखी । फिर मुश्किल यह है कि जिन सब कथाओं, पदेशों या मतों का न्यू टेस्टामेण्ट ग्रन्थ में प्रचार आया है, वे सभी नेकानेक देशों से आकर, क्रिस्ताब्द के पहले ही यहूदियों में मौजूद ीं और "हिलेल" आदि रब्बीगण (उपदेशक) उनका प्रचार र रहे थे । पण्डित लोगों की तो यही राय है, लेकिन दूसरे के र्म के बारे में जिस तरह तुरन्त कोई बात कह डालते हैं, अपने श के धर्म के बारे में यह कहने पर क्या फिर गौरव रहता है ? तएव शनैः शनैः चल रहे हैं । इसका नाम है "हायर क्रिटिसिज़्म" ।

पाश्चात्य बुधमण्डली, इस प्रकार, देश-देशान्तर के धर्म, नीति, ाति इत्यादि की आलोचना कर रही है । हमारी बङ्गला भाषा में कुछ भी नहीं । होगा भी किस तरह—कोई बेचारा यदि दस बारह वर्ष सिरतोड़ मेहनत करके इस तरह की किताब का अनुवाद करे तो वह खुद क्या खाय और किताब छपाये क्या देकर !

ारत में पुरातत्व वेद्या की चर्चा में विघ्न

एक तो देश अत्यन्त दरिद्र है, उनमें विद्या बिल्कुल नहीं, यही कहना ठीक होगा। क्या ऐसा दिन होगा जब हमलोग नाना प्रकार की विद्याओं की चर्चा करेंगे!—"मूकं करोति वाचालं, पंगुं लंघयते गिरिम्—यत् कृपा!"—माता जगदम्बा ही जाने!

यूरोप-इटैली

जहाज नेपल्स में लगा—हमलोग इटैली पहुँचे। इसी इटैली की राजधानी रोम है। यह रोम, उसी प्राचीन बलशाली रोम साम्राज्य की राजधानी है—जिसकी राजनीति, युद्ध-विद्या, उपनिवेश-संस्थापन, परदेश-विजय, अब भी समग्र पृथ्वी का आदर्श है! नेपल्स छोड़कर जहाज मार्साई (मार्सेल्स) लगा था, फिर सीधे लंडन।

गरीबों की उन्नति में ही देशोन्नति है

यूरोप के बारे में तो तुम लोगों की सुनी हुई अनेक कथाएँ हैं,—वे लोग क्या खाते हैं, पहनते हैं, उनके क्या रीति-नीति-आचार इत्यादि हैं—यह अब मैं विशेष क्या कहूँ। परन्तु यूरोपीय सभ्यता क्या है, इसकी उत्पत्ति कहाँ पर है, हमलोगों के साथ इसका क्या सम्बन्ध है, इस सभ्यता का कितना अंश हमें लेना चाहिए—इन सब विषयों पर बहुत सी बातें कहने को शेष हैं। शरीर किसी को छोड़ता नहीं भाईसाहब, अतएव दूसरी बार ये सब बातें कहूँगा। अथवा कहकर क्या होगा? बकझक और बोलने में हमलोगों की तरह (खास तौर से बंगालियों की तरह) मजबूत भी कौन है? अगर कर सको तो करके दिखाओ। हम कार्य करें और मुँह को विदा दें। लेकिन एक बात कह रक्खें,—गरीब निम्न जातियों के भीतर विद्या और शक्ति का

प्रवेश जब होने लगा, तभी से गरीब उठने लगा। अन्य देशों के कूड़े की तरह परित्यक्त हजारों दुखी-गरीब अमेरिका में स्थान पाते हैं, आश्रय पाते हैं; यही अमेरिका के मेरुदण्ड हैं। बड़े आदमी, पण्डित, धनी इन लोगों ने तुम्हारी बातें सुनी हैं या नहीं सुनी, उन्हें समझा या नहीं समझा, तुम लोगों को गालियाँ दीं या तारीफ की, इससे कुछ भी नहीं आता जाता। ये लोग हैं सिर्फ शोभा, देश की बहार।—करोड़ों की संख्या में जो लोग नीच और गरीब हैं, वे ही लोग प्राण हैं। संख्या मे कुछ आता जाता नहीं, धन या दरिद्रता से कुछ आता जाता नहीं, मनसा-वचा-कर्मणा यदि ऐक्य हो तो मुट्ठी भर लोग दुनिया उलट दे सकते हैं—यह विश्वास न भूलना।

विघ्न-बाधा से शक्तिवृद्धि

बाधा जितनी ही होगी उतना ही अच्छा है। बाधा बिना पाये क्या कभी नदी का वेग बढ़ता है? जो वस्तु जितनी नई होगी, जितनी अच्छी होगी, वह वस्तु पहले पहल उतनी ही बाधा पाएगी। बाधा ही तो सिद्धि का पूर्व लक्षण है। जहाँ बाधा नहीं वहाँ सिद्धि भी नहीं है। अलमिति।

हमारे देश में कहते हैं, पैर में चक्र रहा तो मनुष्य आवारा-गर्द होता है। मेरे पैर में शायद अब चक्र ही चक्र हैं।

यूरोप भ्रमण—कान्स्टान्टिनोपल

शायद इसलिए कहता हूँ, पैरों के तलवे देखकर मैंने चक्रों का आविष्कार करने की बड़ी चेष्टा की, परन्तु वह चेष्टा बिल्कुल विफल हो गई—मारे जाड़े के पैर फट गये थे—उससे अकर-चक्कर कुछ भी न दिखलाई पड़े। खैर, जब कि किम्वदन्ती है तब मान लिया

कि मेरा पैर चक्करमय है। फल तो प्रत्यक्ष है—इतना सोचा कि पेरिस में बैठकर कुछ दिन फ्रेंच भाषा, सभ्यता आदि को देखना। पुराने दोस्त-मित्रों को छोड़कर एक गरीब फ्रांसीसी नवीन मित्र के यहाँ जाकर ठहरा, (वे अंग्रेजी नहीं जानते और मेरी फ्रासीसी—एक विचित्र तमाशा थी !) इच्छा थी गूंगे की तरह बैठे रहने की। अक्षमता से मजबूरन, फ्रेंच बोलने का उद्योग होगा और अनर्गल फ्रेंच भाषा निकलती रहेगी और कहाँ चला विएना, तुर्की, ग्रीस, ईजिप्ट जरूसलेम पर्यटन करने, भवितव्य का कौन खण्डन करे, कहो। तुम्हें पत्र लिख रहा हूँ मुसलमान प्रभुत्व की अवशिष्ट राजधानी कान्स्टान्टिनोपूल से।

तीन साथी

साथ में तीन साथी हैं—दो हैं फ्रान्सीसी और एक अमेरिकन। अमेरिकन है, तुम लोगों की परिचिता मिस मेकलौड, फ्रान्सी पुरुष मित्र मस्ये जुलब्बोआ, फ्रान्स के एक प्रतिष्ठित दार्शनिक और साहित्य लेखक; और फ्रान्सीसिनी सखी, जगद्विख्यात गायिका मादमोआजेल कालभे। फ्रान्सी भाषा में "मिस्टर" होते हैं "मस्ये" और "मिस" होती है 'मादमोआजेल'। 'ज' का उच्चारण पूर्व-बंगाल के 'ज' की तरह। मादमोआजेल कालभे आधुनिक काल की सर्वश्रेष्ठ गायिका—अपेरा गायिका हैं। इनके गीतों का इतना आदर है कि इन्हें सालाना तीन चार लाख की आमदनी है, केवल गीत गाकर। इनसे हमारा परिचय पहले से ही है। पाश्चात्य देशों की सर्वश्रेष्ठा अभिनेत्री मादाम सारा बर्नहार्ड, और सर्वश्रेष्ठा गायिका कालभे,

प्रसिद्ध गायिका काल्भे तथा नटी सारा

दोनों ही फ्रान्सीसी हैं, दोनों ही अंग्रेजी भाषा से सम्पूर्ण अनभिज्ञ हैं। लेकिन इंग्लैंड और अमेरिका कभी-कभी जाती हैं और अभिनय कर तथा गीत गाकर लाखों डालर संग्रह करती हैं। फ्रान्सीसी भाषा सभ्यता की भाषा है, पश्चिमी संसार के भद्र पुरुषों का चिह्न सभी लोग जानते हैं, इसलिए इन्हें न अंग्रेजी सीखने का अवकाश है और न प्रवृत्ति ही। मादाम बार्नहार्ड वृद्धा है परन्तु जब सज धज कर मञ्च पर खड़ी होती हैं, तब जिस उम्र और लिंग का अभिनय करती हैं, उसकी हूबहू नकल! बालिका, बालक, जो कहो वही,—हूबहू—और ऐसी ताज्जुब की आवाज! ये लोग कहते हैं, उसके कण्ठ में रुपहले तार बजते हैं! बार्नहार्ड का अनुराग विशेष रूप से भारतवर्ष के ऊपर है, मुझसे बारम्बार कहती हैं, तुम लोगों का देश "ऐंशियेन, ऐसिविलिजे"—बहुत ही प्राचीन, बहुत ही सभ्य है। एक वर्ष भारतवर्ष सम्बन्धी एक नाटक खेला, उसमें मञ्च के ऊपर बिल्कुल एक भारतवर्ष का रास्ता खड़ा कर दिया था—लड़के, बच्चे, पुरुष, साधु, नागा, बिल्कुल भारतवर्ष! मुझसे अभिनय के बाद कहा कि "आज महीने भर से हरएक म्यूज़ियम घूमकर भारतवर्ष के पुरुष, स्त्रियाँ, पोशाक, रास्ता, घाट आदि पहचाना है।" बार्नहार्ड की भारत देखने की बड़ी ही प्रबल इच्छा है—"से मं रेव"—"से मं रेव"—वह मेरा जीवन स्वप्न है। फिर प्रिन्स आफ वेल्स उन्हें बाघ, [illegible] शिकार करायेंगे, प्रतिज्ञा कर चुके हैं। पर [illegible] देश में जाना जाय [illegible] बड़ा! रुपये का

टोटा उन्हें नहीं है—"ला दिविन सारा" (La Divine Sara) "दैवी सारा"—उन्हे रुपये का क्या अभाव है?—जिसका आना जाना बिना स्पेशल ट्रेन के नहीं होता!—वह भरपूर विलास यूरोप के कितने राजे-रजवाड़े नहीं भोग सकते, जिनके थियेटर में महीने भर पहले से दूनी कीमत पर टिकीट खरीद रखने पर तब कहीं जगह मिलती है; उन्हें रुपये का टोटा नहीं है, परन्तु सारा बार्नहार्ड निहायत खर्चीली हैं। उनका भारतभ्रमण इसीलिए अभी रह गया।

कालभे का पाण्डित्य तथा पूर्वावस्था

मादमाआजेल कालभे इस शीत में नहीं गायेंगी—वे आबहवा बदलने के लिए इजिप्त आदि देशों को चली हैं—मैं जाता हूँ, इनका अतिथि होकर, कालभे केवल संगीत की चर्चा नहीं करतीं; इनमें यथेष्ट विद्या भी है, दर्शन-शास्त्र, धर्म-शास्त्र का विशेष समादर करती हैं। इनका निहायत दरिद्र अवस्था में जन्म हुआ था। पर धीरे धीरे अपनी प्रतिभा के बल से, विशेष परिश्रम से, अनेक कष्ट सहकर अब उन्होंने प्रचुर धन पैदा कर लिया है! राजा-बादशाहों के सम्मान की ईश्वरी हैं।

मादाम मेलबा, मादाम एमा एमस, आदि सब प्रसिद्ध गायिकाएँ हैं। जांदरज प्लासँ आदि सब बहुत मशहूर गवैये हैं—ये सभी दो तीन लाख रुपये साल में पैदा करते हैं!—लेकिन कालभे में विद्या के साथ साथ एक नई प्रतिभा है। असाधारण रूप, यौवन, प्रतिभा और दैवी कण्ठ—यह सब एकत्र मिलकर कालभे को गायिकामण्डली में शीर्ष-स्थान पर पहुँचा रहा है।

परन्तु दारिद्र्य-दृष्टि से बढ़ कर दूसरा शिक्षक और नहीं! वह शैशव का अति कठिन दारिद्र्य दुःखकष्ट—जिसके साथ दिन रात लड़ाई कर करके जो यह विजय मिली है उस संग्राम ने उनके जीवन में एक अपूर्व सहानुभूति, एक गम्भीर भाव ला दिया है। फिर इस देश में जैसा उद्योग है, वैसे उपाय भी हैं, हमारे देश में उद्योग रहने पर भी उपाय का बिल्कुल ही अभाव है। बंगाली लड़कियों में विद्या सीखने की समधिक इच्छा रहने पर भी उपाय के अभाव से वे विफल हो जाती हैं। बंगभाषा में सीखने लायक है भी क्या? 'बड़ी जोशीले गंदे उपन्यास और नाटक'। फिर विदेशी भाषा में या संस्कृत भाषा में अटकी हुई विद्या, दो ही चार लोगों के लिए है। इन सब देशों में अपनी भाषा में असंख्यात पुस्तकें हैं। और उसके ऊपर से जब जिस भाषा में कोई नई चीज निकलती है, तो उसी वक्त उसका अनुवाद कर सर्वसाधारण के सामने उसे ये लोग हाजिर करते जा रहे हैं।

जुल बोआ

म्स्ये जुल बोआ प्रसिद्ध लेखक हैं; सब धर्मों, सब कुसंस्कारों, सब ऐतिहासिक तत्त्वों के आविष्कार में विशेष पटु हैं। मध्ययुग में यूरोप में जो सब शैतान-पूजा, जादू, मारण, उच्चाटन, झाड़-फूँक, मन्त्र-तन्त्र थे और अब भी जो कुछ है, वह सारा इतिहास लिपिबद्ध करके इन्होंने एक प्रसिद्ध पुस्तक तैयार की है। ये सुकवि हैं और विक्टर ह्यूगो, ला मार्टिन आदि फ्रांसीसी महाकवि और गेटे, शिलर आदि जर्मन महाकवियों के भीतर भारतवर्ष के जो वेदान्त भाव

प्रविष्ट हैं, उन सब भावों के पोषक हैं। वेदान्त का प्रभाव यूरोप के काव्य और दर्शन-शास्त्र में बहुत है। सभी अच्छे कवि वेदान्ती हैं। दार्शनिक तत्त्व लिखने चले कि घूम फिरकर वेदान्त परन्तु हाँ कोई कोई स्वीकार नहीं करना चाहते। अपनी मौलिकता बहाल रखना चाहते हैं—जैसे हर्बर्ट स्पेन्सर आदि। परन्तु अधिकांश लोग साफ स्वीकार करते हैं। और बिना किये जायँ भी कहाँ—इस तार, रेल्वे और अखबारों के जमाने में। बड़े निरभिमानी और शान्त-प्रकृति और साधारण अवस्था के आदमी होने पर भी इन्होंने बड़ी खातिर से पेरिस में मुझे अपने मकान पर रखा था। इस समय हम लोग एक ही साथ भ्रमण के लिए चले हैं।

यूरोप में वेदान्त का प्रभाव

कान्स्टान्टिनोपल तक हमारे रास्ते के साथी एक और दम्पति हैं—पेयर हियासान्थ और उनकी सहधर्मिणी। पेयर, अर्थात् पिता हियासान्थ थे—कैथलिक सम्प्रदाय के एक कठोर तपस्वी-शाखा के संन्यासी। पाण्डित्य और असाधारण वाग्मिता-गुण तथा तपस्या के प्रभाव से फ्रांसीसी मुल्कों में और समग्र कैथलिक सम्प्रदायों में इनकी विशेष प्रतिष्ठा थी। महाकवि विक्टर ह्यूगो दो आदमियों की फ्रेंच भाषा की तारीफ करते थे—उनमें पेयर हियासान्थ एक हैं। चालीस वर्ष की उम्र होने पर पेयर हियासान्थ ने एक अमेरिकन स्त्री के प्रेमपाश में बंधकर उससे विवाह कर डाला। बड़ा शोरगुल मचा,—अवश्य कैथलिक समाज ने उनका त्याग किया। नंगे पैर, अलखल्ला पहने हुए, तपस्वी वेश छोड़कर, पेयर हियासान्थ गृहस्थों का हैट-कोट-बूट पहन कर होंगे—मस्ये लायजन

पेयर हियासान्थ

औरत ने हमारे एक महातपस्वी साधु को नष्ट कर डाला है।" गृहिणी के लिए कुछ विपत्ति तो है न!—फिर रहना पेरिस में, कैथलिकों के देश में। व्याहे हुए पादरी को देखकर वे लोग घृणा करते हैं। औरत बच्चे लेकर धर्मप्रचार—यह कैथलिक बिल्कुल नहीं सह सकता। गृहिणी में फिर कुछ कर्कशा के लक्षण भी हैं! एक बार गृहिणी ने किसी अभिनेत्री पर घृणा प्रकट करके, कहा, "तुम बिना विवाह किये हुये अमुक के साथ रहती हो, तुम बड़ी खराब औरत हो।" उस अभिनेत्री ने झट जवाब दिया कि "मैं तुम से लाख दर्जे अच्छी हूँ। मैं एक साधारण आदमी के साथ रहती हूँ और कानून के अनुसार विवाह नहीं किया तो न सही; पर तुमने तो महापाप किया है—इतने बड़े एक साधु का धर्म नष्ट कर दिया। यदि तुम्हारे प्रेम की ऐसी ही लहर उठी थी तो साधु की सेवादासी ही बन कर रहतीं; उससे व्याह कर गृहस्थ बना उसे नष्ट क्यों कर डाला?"

ख़ैर, मैं सब सुनता हूँ और चुप रहता हूँ। कुछ हो, वृद्ध पेयर हियासान्थ बड़े प्रेमी हैं और शान्त; वह प्रसन्न हैं अपने स्त्री-पुत्र लेकर,—देशभर के आदमियों को क्या! हाँ, गृहिणी ज़रा शान्त रहे तो शायद सब मिट जाय। लेकिन बात क्या है, समझे भाईसाहब, मैं देख रहा हूँ कि, पुरुष और स्त्रियों में सब देशों में समझने की, विचार करने की राह अलग है। पुरुष एक तरफ से समझायें, स्त्रियाँ दूसरी तरफ से। पुरुषों की युक्ति एक तरह की है और

स्त्री-पुरुषों के समझने के मार्ग

स्त्रियों की दूसरी तरह की। पुरुष स्त्री को माफ करते हैं और दोष पुरुष के सर पर लादते हैं; स्त्रियाँ पुरुष को माफ करती हैं और सब दोष स्त्री पर रखती हैं।

इसके साथ हमारा विशेष लाभ यह है कि उसी एक अमेरिकन को छोड़कर ये लोग कोई अंग्रेजी नहीं जानते। अंग्रेजी भाषा में बातचीत बिल्कुल बन्द है।* लिहाजा किसी तरह मुझे फ्रेंच में ही सब कहना और सुनना पड़ रहा है।

पेरिस नगरी से मित्रवर मैक्सिम ने अनेक स्थानों के पत्र आदि इकट्ठे कर दिये हैं जिससे सब देश ठीक तरह से देखे जा सकें। मैक्सिम प्रसिद्ध मैक्सिमगन के निर्माता हैं

विख्यात तोप निर्माता मैक्सिम

जिस तोप से लगातार गोले चलते रहते हैं, अपने आप ही ठस जाते, आप ही छूट जाते, जिसका विराम नहीं। मैक्सिम पहले के अमेरिकन हैं, अब इंग्लैंड में रहते हैं, वहाँ तोपों के कारखाने आदि हैं। मैक्सिम तोपों की बातें ज्यादा करने पर चिढ़ता है, कहता है, "महाशय, मैंने क्या और कुछ भी नहीं किया, इस आदमी मारनेवाले कल को छोड़कर?" मैक्सिम चीन-भक्त है, भारत-भक्त है, धर्म और दर्शनादि का सुन्दर लेखक है। मेरी पुस्तकें पढ़कर बहुत दिनों से मुझ पर अनुराग रखता है—लिहाजा

अनुराग। और मेक्सिम राजा-रजवाड़ों को तोप बेचता है, सब देशों में जान पहचान है, लेकिन उसके घनिष्ठ मित्र हैं ली हुं चांग, विशेष श्रद्धा चीन पर है, धर्मानुराग कंफुछे मत पर है। चीनी नाम से कभी कभी अखबारों में क्रिस्तान पादरियों के विरुद्ध लिखता है—वे लोग चीन क्या करने जाते हैं, क्यों जाते हैं, इत्यादि;—मेक्सिम, पादरियों का चीन में धर्म-प्रचार बिलकुल नहीं सह सकता। मेक्सिम की गृहिणी भी ठीक वैसी ही है, चीन-भक्त और क्रिस्तानियों से घृणा करनेवाली, लड़के-बच्चे नहीं हैं, वृद्ध आदमी है, धन अटूट है।

यात्रा का निश्चय हुआ, —पैरिस से रेल द्वारा विएना; इसके बाद कान्स्टन्टिनोपल, इसके बाद जहाज द्वारा एथेन्स, ग्रीस, इसके बाद भूमध्यसागर पार इजिप्त, इसके बाद एशिया-माईनर, जेरूसलेम, आदि। "ओरीआँताल एक्सप्रेस ट्रेन" पेरिस से इस्तम्बोल तक रोज दौड़ती है। उसमें अमेरिका की नकल पर सोने, बैठने, खाने की जगह है। ठीक अमेरिका की गाड़ी की तरह संपन्न न होने पर भी बहुत कुछ उसी तरह की है। उस गाड़ी पर चढ़कर २४ अक्तूबर को पेरिस छोड़ रहे हैं।

पेरिस प्रदर्शनी तथा बिदाई

आज २३ अक्तूबर है। कल सन्ध्या समय पेरिस से बिदा लूँगा। इस साल यह पेरिस सभ्य संसार का केन्द्र हो रहा है, इस साल महाप्रदर्शनी है। अनेक दिशाओं और देशों से समागत सज्जनों का संगम है। देशदेशान्तरों के मनीषीगण अपनी अपनी प्रतिभा के प्रकाश से अपने देश की महिमा का विस्तार कर रहे हैं, आज इस पेरिस में। इस महाकेन्द्र की भेरी-ध्वनि आज जिनका नामोच्चारण करेगी,

नाद-तरंग साथ ही साथ उनके स्वदेश को संसार के सम्मुख
ान्वित कर देगी। और मेरी जन्मभूमि—यह जर्मन, फ्रांसीसी,
रेज, इटेली आदि बुध-मण्डली-मण्डित महाराजधानी में तुम कहाँ
बंगभूमि ! कौन तुम्हारा नाम लेता है ? कौन तुम्हारे अस्तित्व की
गा करता है ! उन अनेक गोरांग प्रतिभा-मण्डली के भीतर से
भूमि—हमारी मातृभूमि-के एक यशस्वी वीर युवा ने अपने नाम
घोषणा की,—वह वीर संसार-प्रसिद्ध वैज्ञानिक श्री डाक्टर जे०
० बोस हैं ! अकेले, युवा बंगाली वैद्युतिक ने आज विद्युत वेग से
श्चात्य मण्डली को अपनी प्रतिभा से मुग्ध कर दिया !—वह
द्युत-संचार जिससे उन्होंने मातृभूमि के मृतप्राय शरीर में नवजीवन
तरंग संचार कर दिया ! सम्पूर्ण वैद्युतिक-मण्डली के शीर्ष स्थानीय है
ज जगदीश वसु—भारतवासी, बंगवासी ! धन्य है वीर ! वसु और
की सती, साध्वी, सर्वगुणसम्पन्न धर्मपत्नी जिस देश में जाते
वहीं भारत का मुख उज्ज्वल कर देते हैं—बंगालियों का गौरव
ाते हैं। धन्य दम्पति !

समादर के आकर्षण से उनके घर में ही हुआ! वह पर्वत–निर्झरवत् वाक्-छटा, अग्नि-स्फुलिंगवत् चतुर्दिक समुत्थित भाव-विकास, सम्मोहन संगीत, मनीषी-मनःसंघर्ष-समुत्थित-चिन्तामंत्र-प्रवाह, सब के देशकाल के ज्ञान को नष्ट कर मुग्ध कर रखता था!—उसकी भी समाप्ति हुई।

सभी वस्तुओं का अन्त है। आज एक बार और यह पुंजीकृत–भावरूप–स्थिर–सौदामिनी, यह अपूर्व–भूस्वर्ग–समावेश पेरिस–प्रदर्शनी देख आया।

वृष्टि

आज दो दिन से पेरिस में लगातार बारिश हो रही है। फ्रांस के प्रति सदा ही सदय सूर्यदेव आज कई रोज से विरूप हैं। नाना दिग्देशागत, शिल्प, शिल्पी, विद्या और विद्वानों के पीछे गूढ़ भाव से प्रवाहित इन्द्रियविलास देखकर सूर्यदेव का मुखमण्डल मेघ-कलुषित हो गया है; अथवा काष्ठ, वस्त्र तथा इस अनेकानेक रागरञ्जित माया अमरावती का आशु विनाश सोचकर उन्होंने दुःख से मुख छिपा लिया है।

प्रदर्शनी का टूटना

हमलोग भी अब भगें तो जान बचे। प्रदर्शनी का टूटना एक बड़ा व्यापार है। यही भूस्वर्ग, नन्दनोपम पेरिस के रास्ते, घुटने भर कीच, चूना और बालू से भर जायँगे। दो एक बड़ों को छोड़कर, प्रदर्शनी के सभी घरद्वार, काठकूट, चीथड़ों और चूनाकारी ा ही तो खेल है—जैसे यह कुल संसार! यह सब जब टूटता

रहता है, चूने के मिलके उड़कर दम रोक देते हैं, बाद और कीचड़ों से रास्ते मैले और कर्दम बन जाते हैं, इस पर पानी बरसा कि मामला और भी बन गया।

२४ अक्टूबर को सन्ध्या समय गाड़ी ने पेरिस छोड़ा। अन्धकार पूर्ण रात्रि, देखने का कुछ भी नहीं। मैं और मस्ये बोआ एक कमरे में जल्द ही लेट गये। नींद से जगकर देखता हूँ,—हमलोग फ्रांस की सीमा छोड़कर जर्मन-साम्राज्य में आ पहुँचे हैं। जर्मनी पहले अच्छी तरह

फ्रांसीसी तथा जर्मन सभ्यता

देखा हुआ है; लेकिन फ्रान्स के बाद जर्मनी है—बड़ा ही प्रतिद्वन्दी भाव है। "यात्येकतोऽस्तशिखरं पतिरोषधीना"—एक ओर भुवन-स्पर्शी फ्रांस, प्रतिहिंसा की आग से जलता हुआ खाक हुआ जा रहा है, और एक तरफ केन्द्रीकृत नूतन महाबली जर्मनी महावेग से उदयशिखराभिमुख चला जा रहा है! कृष्णकेश, कुछ खर्वकाय, शिल्पप्राण, विलासप्रिय, अति सुसभ्य फ्रांसीसियों का शिल्पविन्यास और एक तरफ हिरण्यकेश, दीर्घाकार, दिङ्नाग जर्मनों का स्थूल हस्तावलेप। पेरिस के बाद पाश्चात्य-संसार में और दूसरा नगर नहीं है; सब उसी पेरिस की नकल है, कम से कम चेष्टा तो है ही। फ्रांसीसियों में उस शिल्प-सुषमा का सूक्ष्म सौन्दर्य है। जर्मन, अंगरेज, अमेरिकनों में वह अनुकरण स्थूल है। फ्रांसीसियों का बलविन्यास भी जैसे रूपपूर्ण हो, जर्मनों की रूप-विकास-चेष्टा भी भयानक है। फ्रेंच-प्रतिमा का मुखमण्डल क्रोधाक्त होने पर भी सुन्दर है, परन्तु जर्मन-प्रतिमा का मधुर हास्य-मण्डित-मुख भी मानो भयंकर प्रतीत होता है। फ्रेंच सभ्यता स्नायुमयी है,

कपूर की तरह, कस्तूरी की तरह, क्षणभर में उड़कर घर-द्वार भ
देती है; जर्मन सभ्यता पेशीमयी है, सीसे की तरह; पारे की तर
वजनदार, जहाँ पड़ी है, वहाँ पड़ी ही है। जर्मनों की मांसपेशिय
लगातार अश्रान्त भाव से जिन्दगी भर ठकठक हथौड़ी मार सकत
हैं; फ्रांसीसियों की देह नरम है, औरतों की तरह; किन्तु जब केन्द्र
भूत होकर घाव मारती है, तो वह लोहार की तरह होता है, उसक
चोट सहना बड़ा ही कठिन है।

जर्मन फ्रासीसियों की नकल कर बड़ी बड़ी इमारतें उठा र
हैं, बड़ी मूर्तियाँ, अश्वारोही, रथी, उन प्रासाद-शिखरों पर स्थापि
कर रहे हैं, लेकिन जर्मनों के दु-मजले मकान देखने पर पूछने व
इच्छा होती है,—यह मकान क्या आदमियों के रहने के लिए
या हाथियों और ऊँटों का तबेला है? और फ्रांसीसियों का पचमंज़
हाथी-घोड़ों का मकान देखकर भ्रम होता है कि इस मकान
शायद परियाँ रहती होंगी।

अमेरिका जर्मन प्रवाह से अनुप्राणित है। लाखों जर्मन हर
शहर में रहते हैं। भाषा अंग्रेजी होने से क्या हुआ, अमेरिका धीरे-
धीरे जर्मन रूप में बदल रही है। आज जर्मनी

जर्मन प्रभाव

यूरोप का आदेशदाता है, सबके ऊपर, दूसरी
जातियों के बहुत पहले जर्मनी ने प्रत्येक नरनारी को राजदण्ड का
भय दिखाकर विद्या सिखलाई है—आज उस वृक्ष का फल भोजन
बन रहा है, जर्मनी की सेना प्रतिष्ठा में सर्वश्रेष्ठ है। जर्मनी ने जान
लगा दी है युद्धपोतों में भी सर्वश्रेष्ठ पद अधिकृत करने के लिए।
जर्मनी ने पण्य-निर्माण में अंग्रेजों को भी परास्त कर दिया है।

अंग्रेजों के उपनिवेशों में भी जर्मन-पण्य, जर्मन-मनुष्य, धीरे-धीरे एकाधिपत्य लाभ कर रहे हैं। जर्मनी के सम्राट की आज्ञा से सब जातियों ने चीन के क्षेत्र में सर झुका जर्मन सेनापति की आधीनता स्वीकार की थी!

यूरोप में टैक्स का हंगाम

दिन भर गाडी जर्मनी के भीतर से चलती रही, तीसरे पहर जर्मन आधिपत्य के प्राचीन केन्द्र, अब परराज्य, आस्ट्रिया की सीमा में पहुँची। इस यूरोप के प्रत्येक देश में कुछ चीजों पर निहायत ज्यादा शुल्क है, कुछ चीजें सरकार के ही एकाधिकार में हैं, जैसे तम्बाकू। फिर रूस और तुर्की में तुम्हारे राजा की छूट बिना रहे प्रवेश बिलकुल निषिद्ध है; छूट अर्थात पासपोर्ट निहायत जरूरी है। इसके अलावा रूस और तुर्की तुम्हारी किताबें, कागज-पत्र सब छीन लेंगे; इसके बाद वे लोग देखभाल कर अगर समझें कि तुम्हारे पास तुर्की या रूस के राज्य तथा धर्म के विरुद्ध में कोई किताब या कागज नहीं है तो वह सब उसी वक्त वापस कर देंगे—नहीं तो वे सब किताबें और पत्र जब्त हो जाते हैं। दूसरे दूसरे देशों में खास कर इस तम्बाकू का बड़ा हंगामा है। सन्दूक, पिटारा, गठरी, सब खोलकर दिखाना होगा कि तम्बाकू है या नहीं। और कान्स्टान्टिनोपल आने पर, दो बड़े देश, जर्मनी और आस्ट्रिया, और कई छोटे छोटे देशों से गुजरना पड़ता है;—ये छोटे छोटे भाग सब तुरस्क के परगने थे, अब स्वाधीन क्रिश्चान राजाओं ने एकत्र होकर मुसलमानों के हाथ से, जितने हो सके हैं क्रिश्चानवाले परगने छीन लिये हैं, इन छोटी चींटियों की काट बड़े चींटों से भी बहुत ज्यादा है।

२५ अक्तूबर को सन्ध्या के बाद ट्रेन आस्ट्रिया की राजधानी विएना नगरी में पहुँची। आस्ट्रिया और रूस के राजवंश के नर-नारियों को आर्क-डयूक और आर्क-डचेस कहते हैं, इस गाड़ी से आर्क डयूक उतरेंगे; उनके बिना उतरे हुए दूसरे यात्रियों को अब उतरने का अधिकार नहीं है। हमलोग प्रतीक्षा करते रहे। अनेक प्रकार की जरी-बूटेदार वर्दी पहने हुए कुछ सैनिक लोग और पर लगी हुई टोपी लगाये कुछ सैन्य आर्क-डयूक के लिए प्रतीक्षा कर रहे थे। उन लोगों में घिरकर आर्क-डयूक और डचेस दोनों उतर गये। हमलोग भी बचे—चटपट उतरकर सन्दूक-बिस्तरे पास कराने का उद्योग करने लगे। यात्री बहुत कम थे; सन्दूक-बिस्तरा दिखाकर पास कराने में ज्यादा देर नहीं लगी। पहले से एक होटल का पता लगा रखा था, उसका आदमी गाड़ी लेकर प्रतीक्षा कर रहा था। हमलोग भी यथा समय होटल में पहुँचे गये। उस रात को और देखना-भालना क्या होता?—दूसरे दिन प्रातःकाल शहर देखने निकले। सभी होटलों में तथा इंग्लैण्ड और जर्मनी को छोड़ प्रायः सभी स्थानों में फ्रेंच चाल है। हिन्दुओं की तरह दो बार खाना होता है। प्रातःकाल, दोपहर और सायंकाल अर्थात् रात आठ बजे के अन्दर। प्रातःकाल अर्थात् ८—९ बजे के समय कुछ काफी पी जाती है। इंग्लैण्ड और रूस के अतिरिक्त चाय की चाल अन्यत्र बहुत कम है। दिन के नाम है "देजुने" अर्थात् उपवास-भंग, अंग्रेजी

विएना नगरी

होटल में

उसके सेनापति फान माल्तके की युद्ध सम्बन्धी विद्वता। आज हतश्री, हतवीर्य आस्ट्रिया किसी तरह अपने पूर्वकाल के नाम और गौरव की रक्षा कर रहा है। आस्ट्रियन राजवश,—हापस्बर्ग वंश यूरोप का सब से प्राचीन और अभिजात राजवंश है। जो जर्मन राजन्यकुल यूरोप के प्रायः सभी देशों में सिंहासन पर अधिष्ठित है, जिस जर्मनी के छोटे छोटे राजाओं ने इंग्लैण्ड और रूस में भी महाबल साम्राज्यशीर्ष पर सिंहासन की स्थापना की है, उसी जर्मनी के बादशाह अब तक आस्ट्रिया के राजवंश के थे। उस शान और गौरव की इच्छा आस्ट्रिया में पूर्णतः है, केवल अभाव है शक्ति का। तुर्क को यूरोप में "आतुर वृद्ध पुरुष" कहते हैं; आस्ट्रिया को "आतुर वृद्धा स्त्री" कहना चाहिए। आस्ट्रिया कैथलिक सम्प्रदाय में मिली हुई है; उस दिन तक आस्ट्रिया के साम्राज्य का नाम था—"पवित्र रोम साम्राज्य"। वर्तमान जर्मनी 'प्रोटेस्टैन्ट-प्रबल' है। आस्ट्रिया के सम्राट सदा ही पोप के दाहिने हाथ रहे हैं, अनुगामी शिष्य, रोमक सम्प्रदाय के नेता। अब यूरोप में कैथलिक बादशाह केवल एक आस्ट्रिया के सम्राट हैं, कैथलिक संघ की बड़ी लड़की फ्रांस है, अब प्रजातंत्र; स्पेन, पोर्तुगाल, अधःपतित हैं! इटैली ने केवल पोप को सिंहासन-स्थापना की जगह दी है; पोप का ऐश्वर्य, राज्य सब छीन लिया है; इटैली के राजा और रोम के पोप से कभी आँखें भी नहीं मिलतीं, बड़ी शत्रुता है। पोप की राजधानी रोम अब इटैली की राजधानी है। पोप के प्राचीन प्रासाद पर दखल कर अब राजा निवास करते हैं,

पोप तथा इटैली का राजा

पोप का प्राचीन इटैली राज्य अब पोप के वैटिकन (Vatican) प्रासाद की चौहद्दी तक परिमित है। किन्तु पोप का धर्म सम्बन्धी प्राधान्य अब भी बहुत है। इस शक्ति का विशेष सहायक आस्ट्रिया है। आस्ट्रिया के विरुद्ध, अथवा पोप-सहाय आस्ट्रिया की बहुकाल से व्याप्त दासता के विरुद्ध, नई इटैली का अभ्युत्थान हुआ। इसीलिए आस्ट्रिया इटैली के विपक्ष में है। बीच में इंग्लैण्ड के कुटिल परामर्श से नवीन इटैली महासैन्यबल, रणपोतबल संग्रह करने में कटिबद्ध हुई। लेकिन उतना रुपया कहाँ! ऋण के जाल से जकड़कर इटैली

नवीन इटैली की निर्बुद्धिता

नष्ट होने की राह देख रही है, फिर कहाँ का उत्पात खड़ा किया-- अफ्रिका में राज्यविस्तार करने गई। हबशी बादशाह के पास हारकर हतमान, हतश्री होकर बैठ गई है। इधर प्रशिया ने युद्ध में हराकर आस्ट्रिया को बहुत दूर हटा दिया। आस्ट्रिया धीरे धीरे मरी जा रही है, और इटैली नवीन जीवन के दुर्व्यवहार से तद्वत् नालबद्ध हो गई है।

बोनापार्ट

आस्ट्रिया के राजवंशवालों को अब भी यूरोप के सब राजवंशों से ज्यादा अहंकार है। वे लोग बहुत प्राचीन और बहुत बड़े वंश के हैं। इस वंश के विवाह आदि बड़प्पन देखकर किये जाते हैं। कैथलिक बिना हुए उस वंश के साथ विवाह आदि होते ही नहीं। इस बड़े वंश के चक्कर में पड़ने के कारण ही महावीर नेपोलियन का अधःपतन हुआ।

न जाने कैसे उनके दिमाग में समा गया कि बड़े राजवंश की लड़की से विवाह करके पुत्र-पौत्रादि क्रम से एक महावंश की स्थापना करें। जिस वीर ने, "आप किस वंश में पैदा हुए हैं ?" इस प्रश्न के उत्तर में कहा था, "मैं किसीके वंश का सन्तान नहीं हूँ—मैं महावंश का स्थापक हूँ; अर्थात् मुझसे महिमान्वित वंश चलेगा, मैं किसी पूर्व पुरुष का नाम लेकर बड़ा होने के लिए नहीं पैदा हुआ",—उसी वीर का इस वंश-मर्यादा रूपी अन्धकूप में पतन हुआ !

रानी जोसेफिन का परित्याग, युद्ध में पराजित कर आस्ट्रिया के बादशाह से कन्या-ग्रहण, महासमारोह के साथ आस्ट्रियन राजकुमारी मेरी लुई के साथ बोनापार्ट का विवाह, पुत्र-जन्म, नवजात शिशु को रोमराज्य में अभिषिक्त करना, नेपोलियन का पतन, ससुर की शत्रुता, लाइपजिक्, वाटरलू, सेन्ट हेलेना, रानी मेरी लुई का सपुत्र पिता के घर वास, साधारण सैनिक के साथ बोनापार्ट-सम्राज्ञी का विवाह, एक मात्र पुत्र की—रोमराज की मातामह के यहाँ मृत्यु—ये सब इतिहास-प्रसिद्ध कथाएँ हैं।

फ्रांस इस समय पहले से कुछ कमजोर हालत में पड़कर अपना प्राचीन गौरव स्मरण कर रहा है। आजकल नेपोलियन सम्बन्धी पुस्तकें बहुत हैं। सार्दू आदि नाट्यकार आजकल नेपोलियन के बारे में अनेक नाटक लिख रहे हैं। मादाम बार्नहार्ड, रेजाँ आदि अभिनेत्रियाँ, कांफेलां आदि अभिनेतागण उन सब

आजकल फ्रांस में बोनापार्ट के सम्बन्ध में चर्चा

कों का अभिनय कर हर रात को थियेटर भर रहे हैं। सम्प्रति
ग्लें" (गरुड़ शावक) नामक एक पुस्तक का अभिनय कर
नाम बार्नेहार्ड ने पेरिस-नगरी में बड़ा आकर्षण उपस्थित कर
ा है।

गरुड़ शावक' की कहानी

गरुड़ शावक है, बोनापार्ट का एक मात्र पुत्र, मातामहगृह में
ना के प्रासाद में एक तरह नज़र-कैद। आस्ट्रिया के बाद-
शाह के मन्त्री, इस बात में सदा ही सतर्क हैं
कि चाणक्य सदृश मेटारनिक बालक के मन में
पिता की गौरवकहानी बिल्कुल न पहुँचे, परन्तु
पार्ट के दो-चार पुराने सैनिक अनेक उपायों से सामब्रोर्न प्रासाद
शात भाव से बालक की नौकरी करते हैं, उनकी इच्छा है,
ी तरह बालक को फ्रान्स में हाज़िर करना और समवेत-युरोपियन-
न्यगण द्वारा पुनः स्थापित बुर्बों वंश को हटाकर बोनापार्ट वंश
स्थापना करना। शिशु महावीर पुत्र है, पिता की रण-गौरव की
नी सुनकर उसका वह सुप्त तेज बहुत जल्द जग उठा।
त्तकारियों के साथ बालक सामब्रोर्न प्रासाद से एक दिन भागा;
ु मेटारनिक की कुशाग्र बुद्धि ने पहले ही से पता लगा लिया
—उसने यात्रा रोक दी, बोनापार्ट के लड़के को फिर सामब्रोर्न
र में लौटना पड़ा। बद्ध गरुड़ शिशु ने भग्न हृदय हो
ही दिनों में प्राण छोड़ दिये।

सामयोने प्रासाद-दर्शन

सिर्फ़ हिन्दू दस्तकारी, किसी कमरे में किसी दूसरे देश का काम, इसी प्रकार अनेक और। प्रासाद का उद्यान बहुत ही मनोहर है। परन्तु इस समय जितने आदमी इस प्रासाद को देखने जाते हैं; सब यही देखने जाते हैं कि बोनापार्ट-पुत्र किस घर में सोते थे, किस में पढ़ते थे, किस कमरे में उनकी मृत्यु हुई थी, आदि आदि! कितने ही अहमक फ्रेंच स्त्री-पुरुष वहाँ के रक्षक-कर्मचारियों से पूछ रहे हैं, "एगलँ" का कमरा कौनसा है—किस बिस्तर पर वे सोते थे!—अरे अहमक! आस्ट्रिया के लोग जानते हैं कि यह बोनापार्ट का लड़का है। उनकी लड़की, उन पर जुल्म कर, छीन कर हुआ था सम्बन्ध; वह घृणा उनको आज भी नहीं गई। आस्ट्रिया के सम्राट का नाती है, और निराश्रय है, इसीलिए उसे रक्खा है। उसको रोमराज की कोई उपाधि नहीं दी है। सिर्फ आस्ट्रिया के सम्राट का नाती है, इसलिए ड्यूक है, बस। उसे तुम लोगों ने गरुड शिशु मानकर एक किताब लिखी है, और उस पर अनेक प्रकार की कल्पनाएँ जोड़ गांठकर मादाम बार्नहार्ड की प्रतिभा से एक आकर्षण फैला दिया है,—लेकिन यह आस्ट्रिया का कर्मचारी वह काम किस तरह समझेगा? इस पर उस किताब में लिखा गया है कि नेपोलियन के पुत्र को आस्ट्रिया के बादशाह ने मन्त्री मेटारनिक के परामर्श से एक तरह मार ही डाला था। कर्मचारी "एगलँ" सुनकर मुँह फुलाकर बड़बड़ाता हुआ घर-द्वार दिखाने लगा,—क्या करें बख्शीश छोड़ना भी बहुत मुश्किल है। तिस पर, इन आस्ट्रिया आदि देशों में सैनिक विभाग में वेतन नहीं है यही कहना ठीक होगा; एक तरह से रोटियों पर ही रहना पड़ता है। कई साल बाद घर लौट जाते हैं। कर्मचारी के मुँह

ग्रीक चर्च के क्रिस्तान। इन सब विभिन्न सम्प्रदायों को एकीभूत करने शक्ति आस्ट्रिया में नहीं। इसीलिए आस्ट्रिया का अधःपतन हुआ।

वर्तमानकाल में यूरोपखण्ड में जातीयता की एक महात उठी है। एक भाषा, एक धर्म, तथा एक जाति के लोग आपस मिलकर एक हो जाने की चेष्टा कर रहे हैं। ज इस प्रकार की एकता स्थापित हो रही है, वहाँ म बल का प्रादुर्भाव रहा है, जहाँ नहीं है, वहीं न है। वर्तमान आस्ट्रिया-सम्राट की मृत्यु के बाद अवश्य ही जर्म आस्ट्रिया-साम्राज्य का जर्मनभाषी अंश हड़प करने की चेष्टा करेगा- रूस आदि अवश्य बाधा डालेंगे। महासमर की संभावना है। वर्त सम्राट अत्यन्त वृद्ध हैं—वह दुर्योग बहुत जल्द होगा। जर्मन सम् तुर्की के सुलतान के आजकल सहायक हैं। उस समय जब जर्म आस्ट्रिया के ग्रास के लिए मुँह फैलायेगा तब रूस का वैरी त् रूस को कुछ न कुछ बाधा तो देगा ही। इसीलिए जर्मन सम् तुर्क से विशेष मित्रता दिखा रहे हैं।

आस्ट्रिया के 'परिणाम'

विएना में तीन रोज रहकर तबीयत थक गई। पेरिस के ब यूरोप देखना चर्वचोष्य भोजन के बाद इमली की चटनी खा है—वही कपड़े लत्ते, खान पान, वही सब एक ढंग, दुनिया भर के लोगों का अजीब वही एक काला कुर्ता, वही एक विकट टोपी! इसके ऊपर है मेघ और नीचे किलबिला रहे हैं ये काली टोपी और काले कुर्तेवाले, दम जैसे घुटने लगता है। यूरोप भर में वही

यूरोप-अवनति के पथ पर

क पोशाक, एक वही चालचलन कायम चली आ रही है। कृति का कानून है, वह सब मृत्यु का चिह्न है। सैकड़ों वर्ष । कसरत कराकर हम लोगों के आर्यों ने हम लोगों को ऐसे एक र्रे पर कर दिया है कि हम लोग एक ही ढंग से दात माँजते , मुँह धोते हैं, खाते-पीते हैं—आदि;—फलत: हम लोग क्रमशः क यंत्र जैसे हो गये हैं, जान निकल गई है, सिर्फ डोलते फिरते यंत्र की तरह। यंत्र 'ना' नहीं कहता और 'हाँ' भी नहीं हता, अपना दिमाग नहीं लड़ाता। "येनास्य पितरो याताः", पदादे जिस तरफ को होकर गये हैं, चला जाता है, इसके बाद ड़कर मर जाता है इनके लिए वैसा ही होगा। "काल्स्य कुटिला तिः", सब एक पोशाक, एक ही भोजन, एक ही ढाँचे से बातचीत रना, आदि होते होते क्रमश: सब यंत्र, क्रमश: सब "येनास्य तेरो याताः" होगा,—इसके बाद सड़ कर मर जाना।

हंगेरी और आस्ट्रिया

२८ अक्तूबर, फिर रात को ९ बजे वही ओरियेण्ट एक्सप्रेस न पकड़ी गई। ३० अक्तूबर को ट्रेन कानस्टाण्टिनोपल पहुँची। ट्रेन दो रात हंगेरी, सर्विया और बल्गेरिया के भीतर से चली। हंगेरी के अधिकारी आस्ट्रिया सम्राट की प्रजा हैं। किन्तु आस्ट्रिया-सम्राट की उपाधि है "आस्ट्रिया के सम्राट और हंगेरी के राजा।" हंगेरी के आदमी और तुर्की लोग एक ही जाति के, [illegible] के एक गोत्र के हैं। हंगार लोग कैस्पियन ह्रद के उत्तर तरफ से यूरोप आये हैं और तुर्क लोगों ने धीरे धीरे पारस्य के पश्चिम प्रान्त से

एशिया माइनर होकर यूरोप में दखल किया है। हंगेरी के लोग क्रिस्तान हैं और तुर्क मुसलमान हैं। लेकिन वह तातार-खून का लड़ाका भाव दोनों में मौजूद है। हुंगार लोगों ने आस्ट्रिया से अलग होने के लिए बारम्बार लड़ाइयाँ लड़ीं, अब केवल नाम मात्र एकत्र रह गये हैं। आस्ट्रिया के सम्राट नाम ही के लिए हंगेरी के राजा हैं। इनकी राजधानी बूडापेस्त बड़ा साफ सुथरा सुन्दर शहर है। हुंगार लोग बड़े कौतुक-प्रिय हैं। संगीत के शौकीन हैं,—पेरिस में सभी जगह हुंगेरियन बैंड हैं।

सर्विया, बलगेरिया आदि तुर्की के जिले थे,—रूसयुद्ध के बाद यथार्थतः स्वाधीन हुए हैं। परन्तु सुलतान इस समय भी बादशाह हैं और सर्विया, बलगेरिया का परराष्ट्र-सम्बन्धी कोई भी अधिकार नहीं है। यूरोप में तीन जातियाँ सभ्य हैं—फ्रांसीसी, जर्मन और अंग्रेज। शेष लोगों की दुर्दशा हमारी ही तरह है—अधिकांश इतने असभ्य हैं कि एशिया में इतनी नीच कोई जाति नहीं। सर्विया और बलगेरिया में, वही मिट्टी के घर, चीथड़े पहने हुए लोग, मैले-कुचैले—जान पड़ता है, जैसे अपने देश आये! फिर क्रिस्तान हैं न!—दो चार सुअर अवश्य ही हैं। दो सौ असभ्य आदमी जो मैला नहीं कर सकते, वह एक सुअर करता है! मिट्टी के घर, उनकी मिट्टी की छतें, पहनने को चिथड़े, सुअर-सहाय सर्विया या बल्गार! बड़े रक्तस्राव तथा अनेक युद्धों के बाद तुर्कों की दासता छूटी है; लेकिन साथ ही साथ भयानक उत्पात—यूरोप के ढंग से फौज गढ़ना होगा, नहीं तो

यूरोप भर में सिपाही, सिपाही——सर्वत्र सिपाही। फिर भी स्वाधीनता एक चीज है और गुलामी दूसरी। दूसरे लोग अगर जबरदस्ती करायें तो बहुत अच्छा काम भी नहीं किया जा सकता। अपना दायित्व न रहने पर कोई बड़ा काम भी कोई नहीं कर सकता। स्वर्ण शृंखल-युक्त गुलामी की अपेक्षा, एक वक्त भोजन कर, चीथड़े पहनकर रहना लाख गुना अच्छा है। गुलाम के लिए इस लोक में भी नरक है और परलोक में भी वही। यूरोप के आदमी सर्विया, बल्गार आदि लोगों की दिल्लगी उड़ाते हैं,——उनकी भूल, अपारगता आदि लेकर दिल्लगी करते हैं। किन्तु इतने काल की दासता के बाद क्या एक दिन में काम सीख सकते हैं? भूल तो करेंगे——दो सौ करेंगे——करके सीखेंगे,——सीखकर ठीक करेंगे। उत्तरदायित्व हाथ में आने पर अत्यन्त दुर्बल भी सबल हो जाता है,——अज्ञान भी विचक्षण होता है।

रेलगाड़ी हंगेरी, रूमानिया आदि के भीतर से चली। मृतप्राय आस्ट्रिया-साम्राज्य में जो सब जातियाँ वास करती हैं, उनमें हंगेरियनों में जीवन-शक्ति अब भी मौजूद है। जिसे युरोपीय मनीषिगण इन्डोयुरोपियन या आर्यजाति कहते हैं, यूरोप की दो एक क्षुद्र जातियों को छोड़कर, और सब जातियाँ उसी महाजाति के अन्तर्गत हैं। जो दो एक जातियाँ संस्कृत-सम भाषा नहीं बोलतीं, हंगेरियन लोग उन्हीं में अन्यतम हैं, हंगेरियन और तुर्की एक ही जाति हैं। अपेक्षाकृत आधुनिक समय में इसी महा प्रबल जाति ने एशिया और यूरोप खण्ड में आधिपत्य-विस्तार किया है। जिस देश

को इस समय तुर्किस्तान कहते हैं, पश्चिम में हिमालय और हिन्दूकोह पर्वत के उत्तरस्थित यह देश इस तुर्क जाति की आदि निवास-भूमि है। उस देश का तुर्की नाम 'चागवई' है। दिल्ली का मुगल बादशाह वंश, वर्तमान फारस राजवंश, कान्स्टान्टिनोपल-पति तुर्कवंश और हंगेरियन जाति, सभी उस 'चागवई' देश से क्रमशः भारतवर्ष से आरम्भ कर धीरे धीरे यूरोप तक अपना अधिकार बढ़ाते गये हैं, और आज भी ये सब वंश अपने को चागवई कहकर परिचय देते हैं और एक ही भाषा में वार्तालाप करते हैं। ये तुर्की लोग बहुत काल पहले अवश्य असभ्य थे। भेड़, घोड़े, गौओं के दल साथ लिये, स्त्री-पुत्र-टंडा-समेत, जहाँ जानवरों के चरने लायक घास देखते, वहीं डेरा गाड़कर कुछ दिन टिक रहते थे। वहाँ का घास-जल चुक जाने पर अन्यत्र चले जाते थे। अब भी इस जाति के अनेक वंश मध्य एशिया में इसी तरह वास करते हैं। मुगल आदि मध्य एशिया में की जातियों के साथ भाषागत इनका सम्पूर्ण ऐक्य है,—आकृति में कुछ फर्क है। सिर की गढ़न और गाल की हड्डी की उच्चता में तुर्कों का मुख मुगलों के समान है, परन्तु तुर्क की नाक चपटी नहीं, बल्कि बड़ी है, आँखें सीधी और बड़ी हैं, लेकिन मुगलों की तरह दोनों आँखों के बीच में व्यवधान बहुत ज्यादा है। अनुमान होता है कि बहुत काल से इस तुर्की जाति के भीतर आर्य और सेमेटिक खून समाया हुआ है। सनातन काल से यह तुरस्क जाति बड़ी ही युद्धप्रिय है। और इस जाति के साथ संस्कृत-भाषी, गंधारी और ईरानियों के

मिश्रण से—अफ़ग़ान, खिल्जी, हज़ारी, बरकज़ाई, यूसफ़ज़ई आदि युद्धप्रिय, सदा रणोन्मत्त, भारतवर्ष की निग्रहकारिणी जातियों की उत्पत्ति हुई है। बहुत प्राचीनकाल में इस जाति ने बारम्बार भारतवर्ष के पश्चिम प्रान्तस्थ सब देशों को जीतकर बड़े बड़े राज्यों की स्थापना की थी। तब ये लोग बौद्ध धर्मावलम्बी थे, अथवा भारतवर्ष दखल करने के बाद बौद्ध हो जाते थे। काश्मीर के प्राचीन इतिहास में हुष्क, युष्क, कनिष्क नामक तीन प्रसिद्ध तुरुष्क सम्राटों की कथा है; यही कनिष्क महायान के नाम से उत्तरायन में बौद्ध धर्म के संस्थापक थे। बहुत काल बाद इनके अधिकांश ने ही मुसलमान धर्म ग्रहण कर लिया और बौद्ध धर्म के भीतर, एशियास्थ गान्धार, काबुल आदि सब प्रधान प्रधान केन्द्र बिलकुल नष्ट कर दिये। मुसलमान होने के पहले ये लोग जब जो देश विजय करते थे उस देश की सभ्यता और विद्या ग्रहण करते थे और दूसरे देशों की विद्या बुद्धि आकर्षित कर सभ्यता-विस्तार की चेष्टा करते थे। परन्तु जब से मुसलमान हुए, इनकी केवल युद्धप्रियता ही रह गई; विद्या और सभ्यता का नाम कहीं भी न रह गया,—बल्कि जिस देश पर इनकी विजय होती थी, उसकी सभ्यता का दीपक गुल हो जाता है। वर्तमान अफ़ग़ान, गन्धार, आदि देशों में जगह-जगह उनके बौद्ध पूर्व-पुरुषों के बनाये हुए अपूर्व स्तूप, मठ, मन्दिर, विराट मूर्तियाँ सब विद्यमान हैं। परन्तु तुर्कियों के प्रभाव के कारण तथा उन लोगों के मुसलमान हो जाने के कारण वे सब मन्दिरादि प्रायः ध्वंस हो गये हैं और

ाधुनिक अफगान आदि इस तरह के असभ्य और मूर्ख हो गये हैं
कि उन सब प्राचीन स्थापत्यों का अनुकरण करना तो दूर रहा,
नकी यह धारणा है कि इस प्रकार के बड़े काम मनुष्य द्वारा कभी
िये ही न गए होंगे, वरन् 'जिन' जैसे अपदेवताओं द्वारा ही उनका
ार्माण हुआ होगा। वर्तमान फारस की दुर्दशा का प्रधान कारण
ह है कि राजवंश है प्रबल असभ्य तुर्क जाति और प्रजा हैं
अत्यन्त सभ्य आर्य,—प्राचीन फारस-जाति के वंशधर। इसी प्रकार
भ्य आर्यवंशोद्भव ग्रीकों और रोमवालों की अन्तिम रंगभूमि कान्स्टा-
न्टीनोपल् साम्राज्य महाबल बर्बर तुरुस्कों के पैरों रौंदकर नष्ट हो गया
। केवल भारतवर्ष के मुगल बादशाह इस नियम के बाहर थे, यह
ायद हिन्दू भाव और रक्त मिश्रण का फल है। राजपूत, भाट और
ारणों के इतिहास-ग्रन्थों में भारतविजेता कुल मुसलमान वंश, तुर्क
नाम से प्रसिद्ध हैं। यह नाम बहुत ही ठीक है,—कारण, भारत-
जिता मुसलमानों की सेनाएँ जिस किसी जाति से भरी क्यों न
ी हों, नेतृत्व सदा इसी तुर्क जाति के हाथ में रहा था।

बौद्धधर्म-त्यागी तुर्कों के नेतृत्व में तथा बौद्ध या वैदिकधर्म-
ागी तुर्कों के अधीन रहने वाले पुरुषों के बाहुबल से मुसलमानकृत
न्दूजाति के अंशविशेष द्वारा, पैत्रिक धर्म में स्थित अपर हिन्दू
ा बारम्बार विजय का नाम है—भारतवर्ष में मुसल्मान-आक्रमण,
ाजय और साम्राज्यस्थापना। यह तुर्कों की भाषा अवश्य उनके
बेहरों की तरह बहु मिश्रित हो गई है—विशेषतः इन दलों की जो
अपनी सम्प्रति आर्यों से दूर चले गए हैं। इस वर्ग फारस के

शाह पेरिस प्रदर्शनी देखकर कान्स्टान्टिनोपल होकर रेल द्वारा अपने देश को वापस गये। देश-काल का बहुत कुछ व्यवधान रहने पर भी सुलतान और शाह ने उसी प्राचीन तुर्की मातृभाषा में वार्तालाप किया। लेकिन सुलतान की तुर्की—फ़ारसी, अरबी और दो चार ग्रीक शब्दों से मिली हुई थी, शाह की तुर्की कुछ ज्यादा शुद्ध थी।

प्राचीन काल में इन चागताई-तुर्कों के दो दल थे। एक दल का नाम सफ़ेद भेड़ों का दल था और दूसरे दल का नाम काले भेड़ों का दल था। दोनों दल जन्मभूमि काश्मीर के उत्तर भाग से भेड़ चराते चराते और देशों में लूट-मार करते हुए क्रमशः कैस्पियन हृद के किनारे आ पहुँचे। सफ़ेद भेड़वाले कैस्पियन हृद की उत्तर तरफ होकर यूरोप में घुसे और उन्होंने ध्वंसावशिष्ट रोम राज्य का एक टुकड़ा लेकर हंगेरी नामक राज्य स्थापित किया। काले भेड़वाले कैस्पियन हृद की दक्षिण तरफ से क्रमशः फारस के पश्चिम भाग पर अधिकार कर, काकेशस पर्वत लांघ कर, क्रमशः एशिया-माइनर आदि अरबों का राज्य दखल कर बैठे; और धीरे धीरे खलीफा के सिंहासन पर अधिकार कर लिया। फिर पश्चिम रोम साम्राज्य का जितना अंश बाकी था, उसे भी अपने पेट में डाल लिया। बहुत प्राचीन काल में यह तुर्क जाति साँपों की बड़ी पूजा किया करती थी। शायद प्राचीन हिन्दू लोग इन्हें ही नागतक्षकादि के वंशज कहते थे। इसके बाद ये लोग बौद्ध हो गये। बाद में ये लोग जब जो देश जीतते थे, प्रायः उसी देश का धर्म ग्रहण करते थे। कुछ अधिक आधुनिक काल में, जिन दो दलों की बातें हम लोग कह

रहे हैं उनमें सफेद भेड़वाले, क्रिस्तानों को जीतकर स्वयं क्रिस्तान हो गये तथा काले भेड़वालों ने मुसलमानों को जीता और उनका धर्म ग्रहण कर लिया। परन्तु इनकी क्रिस्तानी या मुसलमानी के भीतर अनुसन्धान करने पर आज भी नाग-पूजा तथा बौद्ध धर्म के चिह्न पाये जाते हैं।

हंगेरियन लोग जाति और भाषा में तुर्क होने पर भी धर्म में क्रिस्तान हैं—रोमन कैथलिक। उस समय धर्म की कट्टरता कोई बन्धन नहीं मानती थी, न भाषा का, न रक्त का, न देश का। हंगेरियनों की सहायता बिना पाये, आस्ट्रिया आदि क्रिस्तान राज्य बहुधा आत्मरक्षा न कर सकते। वर्तमान समय में विद्या के प्रचार से, भाषातत्त्व, जातितत्त्व के आविष्कार द्वारा, रक्तगत और भाषागत एकत्व के ऊपर अधिक आकर्षण हो रहा है, धर्मगत एकता क्रमश: शिथिल होती रही है। इसलिए कृतविद्य हंगेरियन और तुर्कों के बीच एक भाव पैदा हो रहा है।

आस्ट्रिया साम्राज्य के अन्तर्गत होने पर भी हंगेरी बारंबार उससे पृथक् होने की चेष्टा कर रहा है। अनेक विप्लव विद्रोह के फल में यह हुआ है कि हंगेरी इस समय नाम के लिए तो आस्ट्रिया का एक प्रदेश है, किन्तु कार्यतः सम्पूर्ण स्वाधीन है। आस्ट्रिया के सम्राट का नाम है "आस्ट्रिया के बादशाह और हंगेरी के राजा।" हंगेरी का सब कुछ अलग है और यहाँ प्रजाओं की शक्ति सम्पूर्ण है। आस्ट्रिया के बादशाह को यहाँ नाम मात्र के लिए नेता बना रखा

जाता है। यहाँ का साम्राज्य भी बहुत दिनों तक नहीं रहेगा, ऐसा नहीं मालूम देता। [illegible], शस्त्र-कुशलता, उदारता आदि गुण हंगेरियनों में खूब है। और भी मुसलमान न होने के कारण, संगीतादि देवदुर्लभ शिल्प को शैतान की कला न सोचने के कारण, संगीत कला में हंगेरियन अग्रगण्य हैं तथा यूरोप भर में प्रसिद्ध हैं।

पहले हम लोगों को ख्याल था कि ठण्डे मुल्क के आदमी मिर्च ज्यादा नहीं खाते,—यह केवल गर्म मुल्कों की बुरी आदत है। लेकिन जैसा मिर्च का खाना हंगरी में शुरू हुआ और रूमानिया, बल्गेरिया आदि में सप्तम में पहुँचा उसके सामने शायद मद्रासियों को भी पीठ दिखानी पड़े!

२६. हिन्दू धर्म के पक्ष में (द्वितीय संस्करण) ॥=)
२७. मेरे गुरुदेव (चतुर्थ संस्करण) ॥=)
२८. कवितावली (प्रथम संस्करण) ॥=)
२९. सरल राजयोग (प्रथम संस्करण) ॥)
३०. वर्तमान भारत (तृतीय संस्करण) ॥)
३१. पवहारी बाबा (द्वितीय संस्करण) ॥)
३२. मेरा जीवन तथा ध्येय (द्वितीय संस्करण) ॥)
३३. मरणोत्तर जीवन (द्वितीय संस्करण) ॥)
३४. मन की शक्तियाँ तथा जीवनगठन की साधनायें ॥)
३५. भगवान रामकृष्ण धर्म तथा संघ—स्वामी विवेकानन्द, स्वामी शारदानन्द, स्वामी ब्रह्मानन्द, स्वामी शिवानन्द; मूल्य ॥=)
३६. मेरी समर-नीति (प्रथम संस्करण) ।≡)
३७. ईशदूत ईसा (प्रथम संस्करण) ।=)
३८. विवेकानन्दजी की कथायें (प्रथम संस्करण) १।)
३९. परमार्थ-प्रसंग—स्वामी विरजानन्द, (आर्ट पेपर पर छपी हुई)
कपड़े की जिल्द, मूल्य ३॥।)
कार्डबोर्ड की जिल्द, ,, ३।)
४०. श्रीरामकृष्ण-उपदेश (प्रथम संस्करण) ॥=)